इग्नू
जन–जन का
विश्वविद्यालय

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मानविकी विद्यापीठ

BHDAE - 182
हिंदी भाषा और संप्रेषण

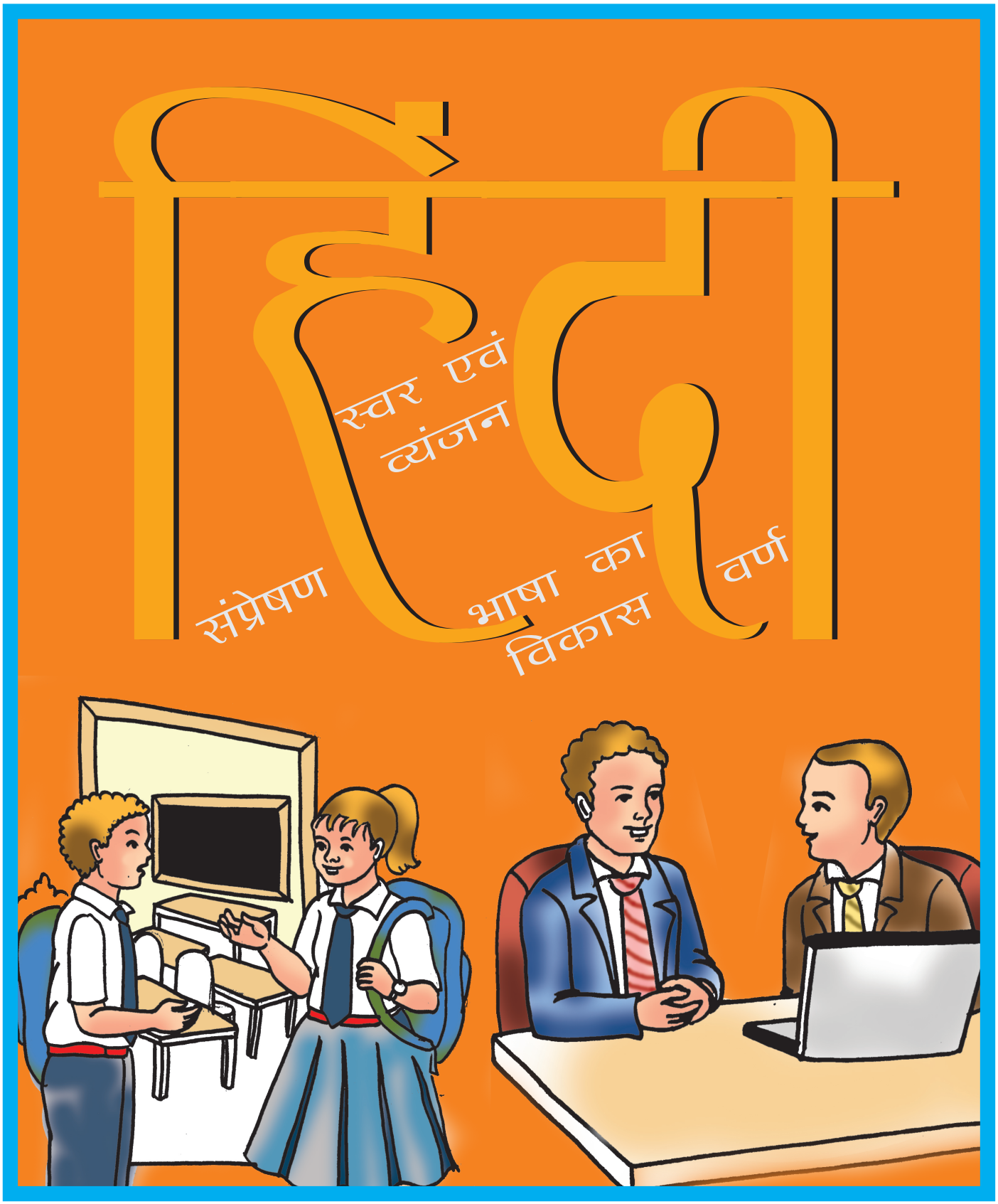

इग्नू
जन-जन का
विश्वविद्यालय

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मानविकी विद्यापीठ

BHDAE-182
हिंदी भाषा और संप्रेषण

खंड

1

हिंदी भाषा और संप्रेषण-1

इकाई 1
हिंदी भाषा का विकास 5

इकाई 2
हिंदी की वर्ण व्यवस्था : स्वर एवं व्यंजन 24

इकाई 3
स्वर के प्रकार 39

इकाई 4
व्यंजन के उच्चारण के प्रकार 53

इकाई 5
वर्णों का उच्चारण स्थान 64

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

पाठ्यक्रम विशेषज्ञ समिति

प्रो. वी. रा. जगन्नाथन
अवकाश प्राप्त प्रोफेसर एवं निदेशक
मानविकी विद्यापीठ,
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. कृष्ण कुमार गोस्वामी
अवकाश प्राप्त प्रोफेसर
केन्द्रीय हिंदी संस्थान,
आगरा (उ.प्र)

प्रो. आलोक गुप्ता
प्रोफेसर एवं डीन
हिंदी भाषा और साहित्य केन्द्र,
गुजरात केन्द्रीय विश्वविद्यालय,
गांधीनगर (गुजरात)

प्रो. ए. अरविन्दाक्षन
अवकाश प्राप्त प्रोफेसर एवं अध्यक्ष,
हिंदी विभाग, कोचीन विज्ञान एवं
प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कोच्चि

प्रो. आर. एस सर्राजु
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग
हैदराबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय, हैदराबाद

प्रो. टी.वी. कट्टीमनी
कुलपति, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय
विश्वविद्यालय, अमरकंटक (म.प्र.)

संकाय सदस्य
प्रो. सत्यकाम
(निदेशक, मानविकी विद्यापीठ)
प्रो. शत्रुघ्न कुमार
प्रो. स्मिता चतुर्वेदी
प्रो. जितेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
(पाठ्यक्रम संयोजक)

पाठ्यक्रम संयोजक

प्रो. जितेन्द्र कुमार श्रीवास्तव, हिन्दी संकाय
मानविकी विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली

खंड संयोजन, संशोधन एवं संपादन

प्रो. जितेन्द्र कुमार श्रीवास्तव, हिन्दी संकाय
मानविकी विद्यापीठ, इग्नू नई दिल्ली

पाठ्यक्रम निर्माण समिति

पाठ लेखक	इकाई सं.
प्रो. कृष्ण कुमार गोस्वामी अवकाश प्राप्त प्रोफेसर, केन्द्रीय हिंदी संस्थान, आगरा	1
प्रो. अरुण होता, प्रोफेसर एवं अध्यक्ष पश्चिम बंग राज्य विश्वविद्यालय बारासात, कोलकाता	2
प्रो. अरुण होता एवं डॉ. हीरालाल बाछोतिया, एन.सी.ई.आर.टी	3
डॉ. अमिता पाण्डेय एवं डॉ. हीरालाल बाछोतिया	4
डॉ. अमिता पाण्डेय सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग, इन्द्रप्रस्थ महिला महाविद्यालय, दिल्ली	5

संपादन सहयोग
डॉ. शंभुनाथ मिश्र, परामर्शदाता
मानविकी विद्यापीठ, इग्नू

सचिवालयिक सहयोग
सुश्री गीता नेगी
निजी सहायक
मानविकी विद्यापीठ, इग्नू

सामग्री निर्माण

श्री के. एन. मोहनन
सहायक कुलसचिव (प्रकाशन)
सा. नि. एवं वि. प्र., इग्नू, नई दिल्ली

श्री सी. एन. पाण्डेय
अनुभाग अधिकारी (प्रकाशन)
सा. नि. एवं वि. प्र., इग्नू, नई दिल्ली

दिसम्बर, 2019
© इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2019

ISBN-978-93-896698-48-3

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस कार्य का कोई भी अंश इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों के विषय में और अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कार्यालय, मैदान गढ़ी, नई दिल्ली–110 068 से प्राप्त की जा सकती है।

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से कुलसचिव, सामग्री निर्माण एवं वितरण प्रभाग द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

लेजर टाइप सेटिंग : राजश्री कम्प्यूटर्स, वी–166ए, भगवती विहार, नजदीक सेक्टर 2, द्वारका, उत्तम नगर, नई दिल्ली–110 059

मुद्रण : एस0 जी0 प्रिन्ट पैक्स प्रा0 लि0, एफ–478, सेक्टर–63, नोएडा 201301, उ0प्र0

पाठ्यक्रम का परिचय

किसी भाषा को सीखने के क्रम में उसके विकास और व्याकरणिक संरचना से परिचित होना अत्यंत आवश्यक है। बी.ए (सामान्य/आनर्स) हिंदी के विद्यार्थी के रूप में अब आप 'हिंदी भाषा और संप्रेषण' पाठ्यक्रम का अध्ययन करने जा रहे हैं। यह पाठ्यक्रम मूलतः विद्यार्थियों को हिंदी भाषा के विकास, व्याकरणिक संरचना और वाक्य निर्माण का बोध कराने के साथ ही उनमें संप्रेषण कौशल का विकास करने के उद्देश्य से तैयार किया गया है। दो खंडों में विभाजित इस पाठ्यक्रम में कुल नौ इकाइयां सम्मिलित हैं।

प्रथम खंड में पांच इकाइयां हैं। इन इकाइयों के माध्यम से आप हिंदी भाषा का विकास, परिभाषा एवं रूप, हिंदी की वर्ण व्यवस्था, स्वर एवं व्यंजन का परिचय उनके प्रकार और उनके उच्चारण स्थान का अध्ययन कर सकेंगे।

हिंदी भाषा को सीखने और उसका अच्छी तरह से उपयोग करने के लिए भाषा के इन आवश्यक तत्वों का अध्ययन प्रत्येक विद्यार्थी के लिए अनिवार्य है। इसका अध्ययन करके विद्यार्थी न केवल हिंदी की वर्ण व्यवस्था से भलीभांति परिचित हो सकेंगे, बल्कि उनमें लेखन और उच्चारण की शुद्धता का भी विकास होगा।

द्वितीय खंड में हिंदी की व्याकरणिक इकाई और हिंदी वाक्य रचना पर केन्द्रित एक-एक इकाइयां तथा संप्रेषण कौशल पर केंद्रित दो इकाइयां सम्मिलित हैं। इस तरह यह खंड कुल चार इकाइयों में विभाजित है। प्रथम दो इकाइयों में जहाँ आप क्रिया, विभक्ति, संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, वाक्य रचना, वाक्य भेद और वाक्य रूपान्तरण आदि का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे वहीं अन्य दो इकाइयों में संप्रेषण के आवश्यक तत्वों, उसके विविध रूप, संप्रेषण कौशल के प्रकार इत्यादि का समुचित अध्ययन कर सकेंगे।

हम आशा करते हैं कि यह पाठ्यक्रम आप के लिए सरल, सहज और बोधगम्य होगा। इसके माध्यम से आप हिंदी भाषा के ज्ञान के साथ ही संप्रेषण कौशल को भी सीख सकेंगे।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

खंड 1 परिचय

हिंदी भाषा और संप्रेषण पाठ्यक्रम का यह प्रथम खंड है। विद्यार्थियों को हिंदी भाषा का परिचय देने के लिए और सामान्य व्याकरण बोध हेतु इस पाठ्यक्रम को तैयार निर्माण किया गया है। भाषा अभिव्यक्ति की प्राथमिक इकाई है। किसी भी भाषा को सही तरीके से सीखने के लिए उसकी व्याकरणिक संरचना का ज्ञान प्राप्त कर लेना आवश्यक होता है। यहाँ हम हिंदी भाषा से संबंधित पाठ्यक्रम का अध्ययन कर रहे हैं। पाठ्यक्रम के इस पहले खंड में हम हिंदी भाषा का विकास, हिंदी की वर्ण व्यवस्था, स्वर एवं व्यंजन के प्रकार, वर्णों के उच्चारण स्थान और हिंदी भाषा की व्याकरणिक इकाइयों पर केन्द्रित पाठों का अध्ययन करेंगे।

'हिंदी भाषा और संप्रेषण' पाठ्यक्रम के इस प्रथम खंड में कुल पांच इकाइयां हैं।

इकाई 1 : 'हिंदी भाषा का विकास' के अंतर्गत विद्यार्थी भाषा की परिभाषा, भाषा की प्रकृति, उसके विविध रूप और हिंदी भाषा के विकास क्रम का अध्ययन करेंगे।

इकाई 2 : 'हिंदी की वर्ण व्यवस्था' में विद्यार्थी स्वर एवं व्यंजन की परिभाषा, प्रकृति और प्रकारों का अध्ययन कर सकेंगे। इसके माध्यम से बोध हिंदी की वर्ण व्यवस्था का बोध सहजता से संभव हो सकेगा।

इकाई 3 : 'स्वर के प्रकार' के द्वारा विद्यार्थियों में स्वरों के प्रकार यथा, ह्रस्व, दीर्घ और संयुक्त की पहचान विकसित होगी तथा इनके सही प्रयोग का बोध उत्पन्न होगा।

इकाई 4 : 'व्यंजन के उच्चारण के प्रकार' के अंतर्गत विद्यार्थी स्पर्श, अन्तस्थ, ऊष्म, अल्पप्राण, महाप्राण, घोष तथा अघोष जैसे प्रकारों का अध्ययन कर सकेंगे।

इकाई 5 : 'वर्णों का उच्चारण स्थान' में विद्यार्थी उच्चारण स्थान के आधार पर वर्णों के समूह कण्ठ्य, तालव्य, मूर्द्धन्य, दन्त्य, ओष्ठ्य तथा दन्तोष्ठ्य का अध्ययन करेंगे।

हमें पूर्ण विश्वास है कि विद्यार्थियों के लिए पाठ्यक्रम का यह खंड उपयोगी और ज्ञानवर्द्धक सिद्ध होगा। पाठ्यक्रम के दूसरे खंड में हम भाषा की व्याकरणिक इकाइयों, हिंदी वाक्य रचना और संप्रेषण कौशल से संबंधित पाठों का अध्ययन करेंगे।

इकाई 1 हिंदी भाषा का विकास

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 भाषा का अर्थ और परिभाषा

1.3 भाषा का स्वरूप और प्रकृति

1.4 भाषा के विविध रूप

- 1.4.1 भौगोलिक या क्षेत्रीयता के आधार पर
- 1.4.2 प्रयोग के आधार पर
- 1.4.3 निर्माण के आधार पर
- 1.4.4 मानकता के आधार पर
- 1.4.5 प्रकार्य के आधार पर
- 1.4.6 ऐतिहासिकता के आधार पर
- 1.4.7 सम्मिश्रीकरण के आधार पर

1.5 हिन्दी भाषा और उसका विकास

1.6 हिन्दी भाषा का स्वरूप और क्षेत्र

1.7 सारांश

1.8 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

1.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद –

- भाषा का अर्थ और उसकी परिभाषा जान सकेंगे;
- भाषा के स्वरूप और उसकी प्रकृति को समझ सकेंगे;
- भाषा के विविध रूपों के बारे में समझ सकेंगे; और
- हिन्दी भाषा के विकास के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

भाषा मानव जाति को मिला एक ऐसा वरदान है जिसके बिना मानव सभ्यता का विकास नहीं हो सकता। भाषा हमारे विचारों, भावों, संस्कारों, रीति-रिवाजों, प्रार्थना और ध्यान, सपनों में, संबंधों और संचार में सभी जगह विद्यमान है। संचार-साधन और ज्ञान-भंडार होने के बावजूद यह चिंतन-मनन का साधन है और प्रसन्नता का स्रोत है। भाषा अतिरिक्त ऊर्जा बिखेरती है, दूसरों में जोश पैदा करती है। एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति अथवा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को ज्ञान का अंतरण करती है। भाषा मानव संबंधों को जोड़ती भी है और तोड़ती है। भाषा के बिना मनुष्य मात्र एक मूक प्राणी रह जाता है। इससे हम अपनी बात और मंतव्य का संप्रेषण दूसरों तक कर पाते हैं और इसी कारण हम अन्य प्राणियों से अलग हो जाते हैं। भाषा सर्वव्यापी है, किंतु कई बार यह न केवल भाषाविदों के लिए गंभीर वस्तु होती है, वरन् दार्शनिकों, तर्कशास्त्रियों, मनोविज्ञानियों, विज्ञानियों, साहित्यिक आलोचकों आदि के लिए भी होती है। वस्तुतः भाषा एक बहुत ही जटिल

मानव वस्तु है, इसलिए यह जानना आवश्यक है कि भाषा क्या है और इसका स्वरूप और प्रकृति क्या है। इसी के साथ हिन्दी भाषा के स्वरूप और इसके विकास के परिप्रेक्ष्य के बारे में जानकारी होना भी आवश्यक है।

1.2 भाषा का अर्थ और परिभाषा

किसी भी वस्तु की परिभाषा उस वस्तु की अपनी प्रकृति और उसके अपने प्रयोजन पर आधारित होती है। भाषा की परिभाषा पर विचार करते हुए यह बात ध्यान में रखना आवश्यक है कि भाषा केवल अपनी संरचना और प्रकृति में जटिल नहीं होती, वरन् अपने प्रयोजन में भी बहुमुखी होती है। यदि वह हमारी चिंतन प्रक्रिया का आधार है तो हमारी संप्रेषण प्रक्रिया का साधन भी है। इससे हमारे मानसिक व्यापार के साथ-साथ हमारा सामाजिक व्यापार भी होता है। इसी प्रकार संरचना के स्तर पर जहाँ भाषा अपनी विभिन्न इकाइयों का संश्लिष्ट रूप ग्रहण करती है, वहाँ वह उन सामाजिक स्थितियों से भी संबंध स्थापित करती है, जिनमें वह प्रयुक्त होती है। इसी कारण विभिन्न विद्वानों ने इसे विभिन्न रूपों में देखने और परिभाषित करने का प्रयास किया है। भाषा की संकल्पना और उसके स्वरूप को स्पष्ट करते हुए कई विद्वानों ने अपनी परिभाषाएँ दी हैं; किंतु प्रकार्य की दृष्टि से कोई सर्वमान्य और पर्याप्त सिद्ध परिभाषा की रचना नहीं हो पाई है। इनमें से कुछ इस प्रकार हैं :

हेनरी स्वीट ने 'ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों के प्रकटीकरण' को भाषा कहा है। **बाबूराम सक्सेना** के मतानुसार 'जिन ध्वनि-चिह्नों द्वारा मनुष्य परस्पर विचार-विनिमय करता है, उसके समष्टि रूप को भाषा कहते हैं। **बेंद्रे** का कथन है कि 'भाषा मनुष्यों के बीच संचार-व्यवहार के माध्यम के रूप में एक प्रतीक व्यवस्था हैं।' इन परिभाषाओं से भाषा को ध्वनि के साथ जोड़ा गया है और उसमें भाषा को एक महत्वपूर्ण माध्यम के रूप में माना गया है। विद्वान-द्वय **ब्लाक** एवं **ट्रेगर** की परिभाषा काफी सीमा तक सार्थक और अधिक मान्य मानी गई है। उनके अनुसार 'भाषा यादृच्छिक ध्वनि-प्रतीकों की व्यवस्था है जिसके द्वारा समाज अपने विचार का आदान-प्रदान करता है।' इस परिभाषा में ब्लाक एवं ट्रेगर ने ध्वनि-प्रतीक, उनकी यादृच्छिकता, उनकी व्यवस्था और समाज जैसे चार पक्षों का उल्लेख किया है।

उपर्युक्त परिभाषाओं से ये स्पष्ट होता है कि भाषा ध्वनिमूलक सार्थक और यादृच्छिक व्यवस्था है जिसके द्वारा मानव समाज अपने भाषा-भाषी समाज से अपने भावों और विचारों का पारस्परिक आदान-प्रदान करता है। यह व्यवस्था ध्वनियों तथा अर्थमूलक तत्वों के योग से संबद्ध है जो विचार-विमर्श के लिए सार्थक भूमिका निभाती है। भाषा के इन मूल तत्वों का विवेचन कर भाषा के स्वरूप और प्रकृति को पहचाना जा सकता है।

1.3 भाषा का स्वरूप और प्रकृति

भाषा को 'यादृच्छिक ध्वनि-प्रतीकों की व्यवस्था' माना गया है, जो समाज में आपस में विचार-विनिमय के लिए प्रयुक्त होती है। वास्तव में भाषा प्रतीकात्मक होती है और इसका कार्य संप्रेषण करना होता है। यह जिन प्रतीकों को लेकर चलती है, वे संकल्पना के रूप में साधारणीकृत होते हैं और संप्रेषण के रूप में भावों एवं विचारों का बोधन कराते हैं। स्विस विद्वान सस्यूर के अनुसार प्रतीक का संबंध संकेतित वस्तु और संकेतार्थ से होता है। संकेतित वस्तु का अर्थ उन भौतिक और यथार्थ वस्तुओं के साथ जुड़ा हुआ है जो गैर-भाषायी तथा वास्तविक जगत् की होती है। उस यथार्थ वस्तु का मानव मस्तिष्क में जो चित्र बन जाता है वह संकल्पना मनोवैज्ञानिक, बौद्धिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, जातीय और परंपरागत परिवेशों से संबद्ध होती है।

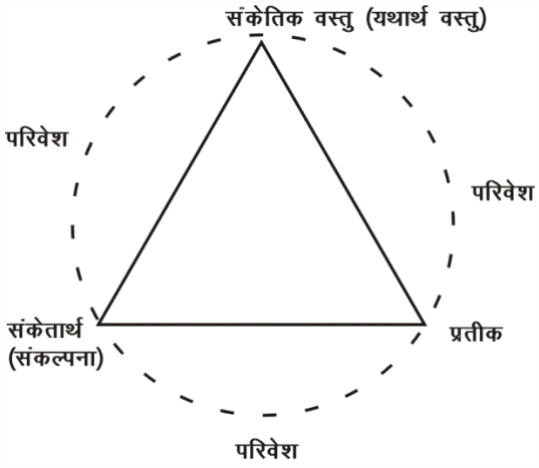

आरेख–1

प्रतीक से अभिप्राय यह है कि प्रतीक ध्वनियों का सार्थक और स्वतंत्र समूह है और प्रतीक के रूप में गृहीत शब्द या वाक्य की संकल्पना उन सभी वस्तुओं या भावों की सामान्यीकृत मानसिक यथार्थता होती है जो निर्दिष्ट वस्तुओं या भावों को अपने भीतर समेट लेती है। इसे 'भाषिक प्रतीक' कहा जाता है। उदाहरण के लिए, हमारे सामने यथार्थ वस्तु 'पेड़' है, जिसके रूपाकार की संकल्पना मानव-मस्तिष्क में बैठ गई है और 'प्+ए+ड़्+अ' ध्वनियों के संयोजन से यह भाषिक प्रतीक बन गया है। 'पेड़' कई प्रकार के होते हैं – छोटा पेड़, बड़ा पेड़, नीम का पेड़, आम का पेड़ आदि किंतु उस शब्द 'पेड़' के रूप में जो संकल्पना पैदा होती है, वह एक है और वह भी साधाणीकृत होती है। अतः इसमें वस्तु की अपनी विशिष्टता का लोप हो जाता है। यदि किसी विशेष 'पेड़' की संकल्पना को लाना होगा तो उसके साथ विशेषण लगाना होगा। जैसे, वह पेड़ देखो, यह नीम का पेड़ है, यह छोटा-सा पेड़ है। ध्यान में रहे कि ये भाषिक प्रतीक मूल रूप में ध्वनिपरक होते हैं किंतु बाद में लिपिबद्ध हो जाते हैं।

संकेतित वस्तु और प्रतीक का संबंध मानसिक रूप से माना जाता है, क्योंकि यह वक्ता और श्रोता के मस्तिष्क में संकल्पना के साथ रहता है लेकिन प्रतीक और यथार्थ वस्तु के बीच जो संकल्पनात्मक संबंध रहता है वह नैसर्गिक या प्राकृतिक न होकर यादृच्छिक होता है। इसलिए विभिन्न भाषाओं में विभिन्न शब्दों का प्रयोग होता है। उदाहरण के लिए, हिन्दी का शब्द 'घोड़ा', संस्कृत में शब्द 'अश्व', अंग्रेजी में 'हॉर्स', चीनी में 'मा', रूसी में 'कोन्य' और फ्रेंच में 'शेवल' कहलाता है। इसी प्रकार 'पशु' शब्द यदि हिन्दी में 'जानवर' का बोधक है तो मलयालम में वह 'गाय' का। इस प्रकार यथार्थ वस्तु, संकल्पना और प्रतीक का संबंध अनिवार्य रूप से स्थानवाची, कालवाची, सामाजिक-सांस्कृतिक, मनौवैज्ञानिक, ऐतिहासिक कई रूपों में दिखाई देता है। इससे अपने-अपने परिवेश में अर्थ भी बदल जाते हैं। कभी-कभी यथार्थ-वस्तु नहीं भी होती है और संकल्पना भी प्रतीक का रूप धारण कर लेती है; जैसे – स्वर्ग, नरक, अमृत आदि प्रतीक परंपरागत संस्कार-सापेक्ष या समाज-संदर्भित होते हैं और इनकी अपनी मानसिक संकल्पना बनी रहती है।

संकेतित वस्तु, संकेतार्थ और प्रतीक के संबंधों के आधार पर कहा जा सकता है कि भाषिक प्रतीक कथ्य और अभिव्यक्ति की समन्वित इकाई है। इसमें इन दोनों पक्षों का होना अनिवार्य है अर्थात् यदि कथ्य और अभिव्यक्ति नहीं है और यदि अभिव्यक्ति है किंतु कथ्य नहीं तो उसे प्रतीक की संज्ञा नहीं दी जा सकती। जब हम प्रतीक के रूप में 'कमल' शब्द का उच्चारण करते हैं तो श्रोता के मन में तत्काल उसका कथ्य उभरकर आता है अर्थात् 'कमल' का रूप और गुण हमारे मस्तिष्क में आ जाते हैं लेकिन यह जरूरी नहीं कि 'नीरज' या 'पंकज' शब्द की अभिव्यक्ति करने से श्रोता उसके कथ्य को पकड़ पाए। इस स्थिति में यह कहा जा सकता है कि कथ्य और अभिव्यक्ति के आंतरिक संबंधों के कारण श्रोता के लिए 'कमल' शब्द प्रतीकवत् सिद्ध है किंतु 'नीरज' या 'पंकज'

कथ्य पक्ष के अभाव के कारण उसके लिए असिद्ध हैं। अतः कथ्य और अभिव्यक्ति का प्रतीक में अटूट संबंध है। इसी संबंध के कारण प्रतीक अपने-आप में सिद्ध है लेकिन व्यक्ति-विशेष या समाज-विशेष के लिए असिद्ध हो सकता है। कथ्य के स्तर पर अर्थ के कई आयाम होते हैं – बोधात्मक, संरचनात्मक, सामाजिक और सांस्थानिक। एक ही प्रतीक में कम-से-कम एक या दो अर्थ मिल जाते हैं। 'जलज' और 'नीरज' दोनों का बोधात्मक अर्थ 'कमल का फूल' है, लेकिन उससे जो अन्य अर्थ निकलता है वह 'विषय-वासनाओं से अप्रभावित व्यक्ति' का संकेत करता है। इस प्रकार एक या एक से अधिक कथ्य एवं अर्थ जहाँ एक ही अभिव्यक्ति में मिल जाते हैं तो वहीं दो या तीन अभिव्यक्तियों में एक ही अर्थ या कथ्य पाया जाता है। वस्तुतः कथ्य और अभिव्यक्ति में जो अटूट संबंध है उसमें लचीलापन भी है। इसी कारण हर भाषा में अनेकार्थी अथवा संदिग्धार्थी और पर्यायवाची शब्द या वाक्य मिल जाते हैं –

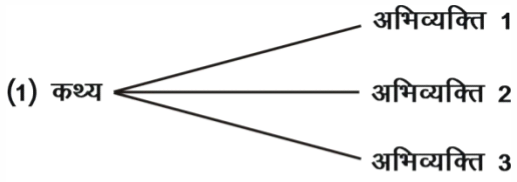

आरेख–2

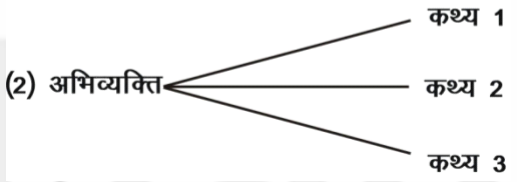

आरेख–3

वाक्य के धरातल पर तीन वाक्य देखें :

क) मोहन ने मोटे लड़के को पीटा है।

ख) मोहन ने जिस लड़के को पीटा वह मोटा है।

ग) मोहन ने उस लड़के को पीटा जो मोटा है।

इन तीनों अभिव्यक्तियों ने एक ही अर्थ का प्रतिपादन किया है।

इसी प्रकार शब्द के धरातल पर 'उसे सोना महंगा पड़ा' और 'मोहन ने उस दिन मन भर मिठाई खाई' वाक्यों में 'सोना' तथा 'मन' अभिव्यक्ति के स्तर पर एक है, किंतु कथ्य के स्तर पर दो हैं। 'सोना' शब्द 'स्वर्ण' और 'निद्रा' दो अर्थ देता है और 'मन', 'वजन' (40 किलो) और 'जी' (दिल) के अर्थ देता है।

वाक्य के धरातल पर 'मैंने पाजामा पहनते हुए मोहन को देखा' के अभिव्यक्ति के स्तर पर दो अर्थ हो सकते हैं। उदाहरण के लिए,

क) मैं पाजामा पहन रहा था, मैंने मोहन को देखा।

ख) मैंने जब मोहन को देखा, मोहन पाजामा पहन रहा था।

प्रतीकों की व्यवस्था

यह भी ध्यान में रहे कि कोई भी भाषा प्रतीकों की केवल लड़ी या समूह नहीं होती वरन् उसकी व्यवस्था होती है। उदाहरण के लिए, हिन्दी में 'राम मोहन को पीटता है' वाक्य में 'राम' कर्ता के रूप में पहले आता है, बाद में 'मोहन' कर्म के रूप में और फिर क्रिया 'पीटता है' आती है। इस प्रकार हिन्दी की मूल आंतरिक व्यवस्था 'कर्ता-कर्म-क्रिया' है

(राम सेब खाता है)। हर भाषा की अपनी व्यवस्था होती है। अंग्रेजी की व्यवस्था है 'कर्ता-क्रिया-कर्म' (Rama eats an apple)। इस प्रकार प्रतीकों की आंतरिक व्यवस्था भाषा है। इन भाषिक प्रतीकों की व्यवस्था अपनी प्रकृति में संरचनात्मक होती है जो भाषा के रूप में प्रतिफलित होती है।

समाज और प्रतीक का संबंध : समाज में प्रतीक हेतु का काम करते हैं, क्योंकि भाषा कई प्रयोजनों की सिद्धि करती है। समाज से अभिप्राय उस भाषा-भाषी समुदाय से है जिसके अपने सामाजिक स्तर होते हैं, सांस्कृतिक रीति-रिवाज और परंपराएँ होती हैं। यह समाज अपनी भाषा में कार्य-व्यापार करता है। वह भाषा के सहारे ही सोचता है, विचार-विमर्श करता है। इसमें समाज के सामाजिक, सांस्कृतिक, परंपरागत, मनोवैज्ञानिक, ऐतिहासिक, भौगोलिक, प्रयोजनपरक आदि विभिन्न परिवेश या संदर्भ जुड़े होते हैं। हमारे सामाजिक और पारिवारिक संबंधों की जानकारी के साथ-साथ वक्ता-श्रोता के अंतर्वैयक्तिक संबंधों की जानकारी भी मिलती है। उदाहरण के लिए, मध्यम पुरुष सर्वनाम के 'तू', 'तुम' और 'आप' के अपने सामाजिक संदर्भ हैं। सांस्कृतिक परिवेश में पुष्प, कलश, अक्षत आदि शब्दों का जो प्रयोग होता है, उनके स्थान पर फूल, लोटा, चावल आदि शब्दों या पर्यायों का प्रयोग वर्जित माना जाता है। इस प्रकार भाषा का मुख्य प्रकार्य संप्रेषण है जो अपनी संरचनात्मक व्यवस्था में सामाजिक परिवेश, सांस्कृतिक रीति-रिवाज, परंपराओं आदि को अभिव्यक्त करती है। इसलिए भाषिक प्रतीक और उसकी अपनी व्यवस्था की प्रकृति के आधार पर भाषा को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है कि भाषा मानव-मुख से निस्सृत ध्वनि-प्रतीकों की वह संरचनात्मक, संदर्भगत और परिवेशगत व्यवस्था है जो अपनी प्रकृति में यादृच्छिक तथा रूढ़िपरक होती है और उससे समाज अपने विचारों और भावों का आदान-प्रदान करता है।

भाषा को कथ्य (अर्थ) और अभिव्यक्ति (ध्वनि) दोनों के धरातल पर देखा जाता है। दूसरे शब्दों में, कथ्य और अभिव्यक्ति के संबंधों को जानना या समझना भाषा का विश्लेषण करना है, लेकिन वक्ता के भीतर जो व्याकरण अव्यक्त रूप में होता है वह संदर्भ में बाहर नहीं होता वरन् उसमें उसके प्रयोग संबंधी नियमों की भी पकड़ होती है। यह भाषिक क्षमता उच्चारण अथवा लेखन के माध्यम से व्यवहार में आने पर विभिन्न भाषिक कौशलों (अर्थात बोलना-सुनना और पढ़ना-लिखना) के रूप में कार्यान्वित होती है। इस प्रकार भाषिक कौशलों का विकास व्यक्ति की भाषिक क्षमता और उसके व्यावहारिक रूपों में होता है।

बोध प्रश्न 1

i) **निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए।**

1. ब्लाक और ट्रेगर की परिभाषा देते हुए यह बताइए कि इस परिभाषा में किन चार पक्षों का उल्लेख किया है।

   .....

   .....

   .....

2. ध्वनि-प्रतीक से क्या अभिप्राय है? सविस्तार बताइए।

   .....

   .....

   .....

3. प्रतीकों की व्यवस्था का अर्थ क्या है? इसे उदाहरण सहित समझाइए।

.....

.....

.....

4. समाज का आशय स्पष्ट करते हुए यह भी बताइए कि प्रतीक-व्यवस्था का समाज से क्या संबंध है।

.....

.....

.....

ii) निम्नलिखित में सही (✓) या गलत (×) वाक्य कौन से हैं? चिन्हित कीजिए।

क) भाषा ध्वनि-प्रतीकों की यादृच्छिक व्यवस्था नहीं होती। ( )

ख) भाषा का प्रमुख प्रकार्य संप्रेषण है। ( )

ग) भाषा ध्वनि-प्रतीकों की व्यवस्था है। ( )

घ) भाषा अपने प्रयोजन में बहुमुखी होती है। ( )

ङ) प्रतीक में कथ्य और अभिव्यक्ति का संबंध अटूट तो है, लेकिन लचीलापन नहीं है। ( )

1.4 भाषा के विविध रूप

भौगोलिक, ऐतिहासिक, प्रयोगात्मक, प्रयोजनपरक आदि विभिन्न आधारों पर भाषा के विविध रूप दिखाई देते हैं।

1.4.1 भौगोलिक या क्षेत्रीयता के आधार पर

क) **व्यक्ति बोली (Ideolect)**

सामाजिक, क्षेत्रीय और पर्यावरणीय संदर्भों का व्यक्ति की भाषा पर प्रत्यक्ष एवं दूरगामी प्रभाव पड़ता है। इसी कारण हर व्यक्ति की अपनी व्यक्ति बोली होती है। हॉकेट के शब्दों में – ''किसी निश्चित समय पर व्यक्ति-विशेष का समूचा वाक्-व्यवहार उसकी व्यक्ति बोली है।'' यह व्यक्ति बोली शाब्दिक और व्याकरणिक व्यक्तिपरकता के कारण ही संभव होती है।

ख) **स्थानीय बोली (Local Dialect)**

बहुत सी व्यक्ति-बोलियाँ मिलकर एक स्थानीय बोली बनती है जिनमें ध्वनि, रूप, वाक्य एवं अर्थ के स्तर पर पारस्परिक बोधगम्यता होती है। यह किसी छोटे स्तर पर बोली जाती है, जिनमें व्यक्ति-बोलियों का समाविष्ट रूप होता है।

ग) **उप बोली (Sub Dialect)**

एकाधिक स्थानीय बोलियाँ मिलकर एक उपबोली बनती हैं; जैसे – भोजपुरी की छपरिया, खखार, शाहवारी, गोरखपुरी, नागपुरिया आदि अनेक उपबोलियां हैं।

घ) **बोली (Dialect)**

एकाधिक उपबोलियाँ मिलकर एक बोली बनती है जिसे विभाषा भी कहा जाता है। हालांकि कुछ विद्वानों ने कुछ बोलियों के उपवर्ग को उपभाषा कहा है; जैसे बिहारी उपभाषा में भोजपुरी, मैथिली और मगही बोलियों का वर्ग है।

ङ) **उपभाषा (Sub language)**

कुछ विद्वानों ने कुछ बोलियों के उपवर्ग को उपभाषा कहा है; जैसे बिहारी उपभाषा में भोजपुरी, मैथिली और मगही बोलियों का एक वर्ग है। लेकिन यह वर्गीकरण भ्रामक और गलत है। इसमें व्याकरणिक समानता और परस्पर बोधगम्यता तो काफी हद तक मिल सकती है किंतु जातीय अस्मिता के कारण इनमें भिन्नता है। अतः हिन्दी को बिहारी, राजस्थानी आदि उपभाषाओं से अलग रखना सही नहीं है।

च) **भाषा (Language)**

भाषा का क्षेत्र व्यापक होता है जिसमें एकाधिक बोलियाँ अथवा उपभाषाएँ मिलकर एक भाषा बनाती है। एक भाषा के अंतर्गत एकाधिक बोलियाँ हो सकती हैं। जैसे हिंदी भाषा के अंतर्गत खड़ी बोली, ब्रजभाषा, अवधी, भोजपुरी, हरियाणवी, मारवाड़ी आदि अट्ठारह बोलियाँ अथवा पश्चिमी हिंदी, पूर्वी हिंदी, बिहारी, पहाड़ी, और राजस्थानी उपभाषाएं हैं। भाषा में ऐतिहासिकता, जीवंतता, स्वायत्तता और मानकता चार गुण पाए जाते हैं। ऐतिहासिकता से अभिप्राय उनकी परंपरा और विकास से है, जीवंतता का अर्थ उसके प्रयोग और प्रचलन से है, स्वायत्तता से आशय सभी कार्य क्षेत्र में इसका प्रयुक्त होना है और मानकता का अर्थ भाषा की संरचना में एकरूपता है। यद्यपि बोली और भाषा में व्याकरणिक समानता और बोधगम्यता तो प्रायः मिल जाती है, किंतु जातीय अस्मिता तथा जातीय बोध के कारण भाषा विशाल समुदाय की प्रतीक बन जाती है।

1.4.2 प्रयोग के आधार पर

प्रयोग के आधार पर भाषा के विभिन्न रूप मिलते हैं, यथा –

क) **सामान्य बोलचाल की भाषा** (Language for Common use) : किसी भी समाज में रोजमर्रा के रूप में प्रयुक्त होने वाली सामान्य भाषा होती है। यह प्रायः संपर्क भाषा का काम करती है। यह अपनी विभिन्न भाषिक इकाइयों, शब्दावली और व्याकरणिकता के आधार पर अपनी पहचान बनाती है।

ख) **साहित्यिक भाषा** (Literary Language): यह भाषा का वह आदर्श रूप है जिसका प्रयोग साहित्य-रचना, शिक्षा आदि में होता है। यह प्रायः परिनिष्ठित होती है किंतु साहित्यिक भाषा कभी-कभी सामान्य भाषा के नियमों को तोड़ती है। विशिष्ट चयन-संयोजन से यह विशिष्ट भाषा बन जाती है। हिन्दी, अंग्रेजी, फ्रेंच, रूसी, जर्मन आदि भाषाएँ साहित्यिक भाषा के रूप में भी प्रयुक्त होती है।

ग) **व्यावसायिक भाषा** (Language for Common use and Trade): यह भाषा व्यवसाय, व्यापार में प्रयुक्त होने के लिए विशेष रूप धारण करती है। यह प्रायः औपचारिक एवं अनौपचारिक और तकनीकी या अर्द्धतकनीकी होती है। यह लिखित और मौखिक दोनों रूपों में प्रयुक्त होती है। इसकी व्यवसाय या व्यापार संबंधी अपनी विशिष्ट शब्दावली और संरचना होती है।

घ) **कार्यालयी भाषा** (Official use): इस भाषा का प्रयोग कार्यालयों, निकायों, कंपनियों, प्रशासन आदि में होता है। यह सामान्य भाषा पर आधारित तो होती है लेकिन शब्दावली तथा संरचना में अंतर मिल सकता है। यह तकनीकी या अर्द्धतकनीकी होती है, इसीलिए यह प्रायः औपचारिक शैली में लिखी जाती है। इसके मौखिक रूप के स्थान पर लिखित रूप का अधिक प्रयोग होता है।

ङ) **राजभाषा** (Official Language): यह सरकार और जनता के बीच प्रयुक्त होने वाली भाषा है। यह प्रायः परिनिष्ठित और मानक होती है। यह देश में अधिक बोले जाने वाली भाषा होती है। इसमें विषयानुसार शब्दावली और संरचना का प्रयोग होता है। इसका प्रयोग प्रायः सरकारी मंत्रालयों, कार्यालयों, कंपनियों, नियमों,

निकायों, संसद आदि में होता है ताकि जनता के साथ संबंध बनाया जा सके। इसे सर्वजन-सर्वकार्य सुलभ बनाने के लिए इसकी शब्दावली में उपयुक्त चयन करने की भी सुविधा रहती है। देश में प्रयुक्त अन्य भाषाओं की अपेक्षा इसका प्रायः प्रमुख स्थान रहता है। भारत की राजभाषा हिन्दी है।

च) **राष्ट्रभाषा** (National language): राष्ट्र की प्रतिष्ठा का प्रतीक राष्ट्रभाषा होती है। इसे राष्ट्रीय स्तर पर गौरवमय स्थान प्राप्त होता है, जो राष्ट्रीय ध्वज और राष्ट्रीय गान का होता है। वास्तव में राष्ट्रभाषा का संबंध राष्ट्रीय चेतना से होता है और राष्ट्रीय चेतना सांस्कृतिक चेतना से जुड़ी होती है। इसमें अपने देश की महान परंपरा और सामाजिक-सांस्कृतिक अस्मिता जागृत होती है। राष्ट्रभाषा राजभाषा हो सकती है लेकिन राजभाषा राष्ट्रभाषा भी हो, यह आवश्यक नहीं। भारत में अधिकतर भाषाओं का गौरवमय इतिहास रहा है, इसलिए बहुभाषी भारत में इनको राष्ट्रभाषा कहा जा सकता है।

छ) **गुप्त भाषा** (Cant): यह भाषा किसी विशेष वर्ग या समूह या संप्रदाय में प्रयुक्त होती है, जिसे उसी वर्ग के लोग समझ सकें। इसे वर्ग भाषा या चोर भाषा (roget) भी कहते हैं। इसकी सीमा भौगोलिक नहीं होती। वस्तुतः यह भाषा सेना, डकैतों या चोरों द्वारा प्रयुक्त होती है। इसे कूट भाषा (Code language) भी कह सकते हैं, जो गोपनीय और मनोरंजन के लिए प्रयुक्त होती है। यह वस्तुतः अंतरंग वर्ग की भाषा है।

ज) **मृत भाषा** (Dead language): जिस भाषा का प्रयोग भूत काल में जीवंत भाषा के रूप में होता रहा हो, जिसका विपुल साहित्य-भंडार भी हो और जिसका प्रयोग राज-काज में भी हुआ हो, किंतु वर्तमान काल में यदि जिसका व्यवहार सामाजिक दृष्टि से न हो रहा हो अथवा उसका प्रयोग बहुत ही सीमित हो गया हो तो उसे मृत भाषा कहते हैं। वर्तमान में इस भाषा का अस्तित्व परंपरा, धर्म, संस्कृति को सुरक्षित रखने की दृष्टि से होता है। यह एक प्रकार से पुस्तकालय भाषा का रूप ले लेती है। ग्रीक, लेटिन, संस्कृत आदि भाषाओं का कभी अत्यधिक प्रयोग होता था, किंतु अब इनका प्रयोग अतिसीमित संदर्भों में हो रहा है।

1.4.3 निर्माण के आधार पर

i) **सहज भाषा** – सामान्य बोलचाल की भाषाएँ, जिनका उद्‌भव प्राकृतिक और सहज रूप में हुआ है; जैसे हिन्दी, अंग्रेजी, जर्मन।

ii) **कृत्रिम भाषा** – विभिन्न भाषाओं के बीच सार्वभौमिक रूपों को लेकर अंतरराष्ट्रीय संप्रेषण की दृष्टि से कृत्रिम भाषा के निर्माण कार्य का प्रयास हुआ; जैसे – एस्पेरैंतो, इंडो। इसका उद्‌देश्य विभिन्न भाषा-भाषी लोगों को परस्पर लाकर भाषिक आदान-प्रदान की सुविधा देना था। कृत्रिम भाषा के दो उपभेद हैं –

- सामान्य कृत्रिम भाषा – सामान्य बोलचाल में प्रयुक्त करने के लिए बनाई गई भाषा; जैसे – एस्पेरैंतो भाषा
- गुप्त कृत्रिम भाषा – किसी विशिष्ट प्रयोजन के लिए बनाई गई भाषा। सेना, दलालों, डाकुओं आदि की भाषा।

1.4.4 मानकता के आधार पर

मानक या परिनिष्ठित भाषा (standard language): जो व्याकरणसम्मत तथा प्रयोगसम्मत हो। ध्वनि, शब्द, वाक्य आदि में व्याकरण सम्मत होने के साथ-साथ एकरूपता और लोक स्वीकृति हो; जैसे – मुझे घर जाना है।

मानकेतर भाषा (Non-standard language): जो प्रयोगसम्मत हो, जिसमें लोकस्वीकृति हो किंतु व्याकरणसम्मत न हो; जैसे मैंने घर जाना है।

अमानक भाषा : जो व्याकरणसम्मत और एकरूपी न हो तथा उसे लोकस्वीकृति भी प्राप्त न हो। यथा – मेरे को जाना है।

उपभाषा (Slang): यह भाषा व्यवहार में अनौपचारिकता का अतिशयवादी रूप है जो प्रायः अशिक्षित या अर्द्धशिक्षित वर्ग के लोगों में चलती है। इसमें तत्वों के साथ-साथ अशिष्ट एवं अग्राह्य रूपों तथा स्थानीय बोलचाल के ठेठ और अश्लील शब्दों का भी प्रयोग धड़ल्ले से होता है।

1.4.5 प्रकार्य के आधार पर

संपूरक भाषा – निजी ज्ञान की वृद्धि के लिए द्वितीय भाषा प्रयोग करना सीखना। यह पुस्तकालय भाषा होती है जिसका सक्रिय प्रयोग नहीं होता। राजनयिकों आदि द्वारा सीमित प्रयोग के लिए भी यह भाषा सीखी जाती है।

परिपूरक भाषा – सामाजिक प्रयोजनों की पूर्ति के लिए समुदाय में प्रचलित दूसरी भाषा को जानना आवश्यक है। मातृभाषा के साथ-साथ सामाजिक स्तर पर परिपूरक के रूप में प्रयुक्त भाषा; जैसे – भारत में हिन्दी या अपनी मातृभाषा के साथ अंग्रेजी।

सहायक भाषा – व्यक्ति अपने समुदाय में दूसरी भाषा का ज्ञान अपने ज्ञान की सहायक भाषा के रूप में करता है; जैसे – हिन्दी और संस्कृत। हिन्दी का प्रयोग करते हुए व्यक्ति को कभी संस्कृत की भी सहायता लेनी पड़ती है।

समतुल्य भाषा – जब कोई व्यक्ति दूसरी भाषा में भी समतुल्य ज्ञान प्राप्त कर धीरे-धीरे उस भाषा का भी उन सभी सामाजिक संदर्भों में प्रयोग करने लगे जिनमें वह मातृभाषा का करता रहा है उनके लिए समतुल्य भाषा हो गई है। इसमें दोनों भाषाओं पर समान अधिकार की अपेक्षा होती है; जैसे – भारत में हिन्दीतर भाषी अपनी मातृभाषा के स्थान पर हिन्दी का प्रयोग करने लगते हैं। इसलिए अमेरिका में विभिन्न देशों के बसे लोग अपनी-अपनी मातृभाषा छोड़कर अंग्रेजी का प्रयोग करने लगे हैं।

1.4.6 ऐतिहासिकता के आधार पर

मूल या उद्‌गम भाषा : मूल या उद्‌गम भाषा, भाषा का वह प्राथमिक स्वरूप है जो स्वयं किसी से प्रसूत नहीं होता वरन् वह अन्य भाषाओं को प्रसूत करता है, अर्थात् जिससे अन्य भाषाएँ निकली हों, जैसे – भारोपीय भाषा।

प्राचीन भाषा : जो प्राचीन काल में प्रयुक्त हुई हों; जैसे संस्कृत, ग्रीक, लेटिन, हिब्रू, तमिल।

मध्यकालीन भाषा : जिनका प्रयोग मध्यकाल में हुआ हो। भारतीय संदर्भ में पालि, प्राकृत, अपभ्रंश।

आधुनिक भाषा : जिनका प्रयोग आधुनिक काल में हो रहा हो; जैसे हिंदी, मराठी, बंगला, अंग्रेजी, फ्रेंच।

1.4.7 सम्मिश्रीकरण के आधार पर

पिजिन (Pidgin): जब कोई भाषाभाषी समुदाय किसी अन्य भाषाभाषी समुदाय में उपनिवेश बनाकर रहता है तो उनके परस्पर संपर्क से दो भाषाओं के मिश्रण की प्रक्रिया प्रारंभ हो जाती है। यह भाषा का प्रारंभिक और सरलीकृत रूप होता है। यह किसी समुदाय की मातृभाषा नहीं होती। यह एक प्रकार की मिश्रित भाषा होती है। इसलिए इसे संकर भाषा भी कहते हैं।

क्रियोल (Creole) : यह पिजिन का विकसित रूप है। पिजिन बोलने वाली पीढ़ी के बाद आने वाली पीढ़ी पिजिन को क्रियोल में बदल देती हैं। यह भाषा मूल भाषा की ध्वनि और रूपपरक संरचना को त्याग कर अपना स्वतंत्र स्वरूप बना लेती है। मॉरिशस, गुयाना, सूरीनाम, त्रिनिदाद-टोबेगो आदि देशों में क्रियोल का प्रयोग होता है। इनमें कहीं फ्रेंच,

अंग्रेजी और हिंदी के तत्व हैं तो कहीं डच और हिन्दी के और कहीं अंग्रेजी और हिन्दी के। इसे संसृष्ट भाषा भी कहा जाता है।

बोध प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए।

1. निम्नलिखित रूपों के अंतर स्पष्ट कीजिए।

   (क) बोली और भाषा (ख) उपभाषा और बोली

   (ग) पिजिन और क्रियोल (घ) मानक भाषा और और अमानक भाषा

2. राष्ट्रभाषा से आप क्या समझते हैं? इसे स्पष्ट कीजिए।

   .....

   .....

   .....

3. भारत की उन पाँच भाषाओं के नाम बताइए जिन्हें आधुनिक भाषा कहा जाता है।

   .....

   .....

   .....

आपने भाषा की परिभाषा, स्वरूप, प्रकृति और उसके विविध रूपों एवं प्रयोगों के बारे में पढ़ा है। अब हम हिन्दी भाषा के विकास और स्वरूप एवं क्षेत्र के संबंध में चर्चा करेंगे।

1.5 हिन्दी भाषा और उसका विकास

संसार में बोली जाने वाली भाषाओं की निश्चित संख्या बता पाना संभव नहीं है। फिर भी यह अनुमान है कि विश्व में लगभग सात हजार भाषाएँ बोली जाती हैं। ध्वनि, व्याकरण तथा शब्द-समूह के आधार पर भौगोलिक दृष्टि से इन भाषाओं का वर्गीकरण पारिवारिक संबंधों के अनुसार किया गया है। इस वर्गीकरण में भारोपीय भाषा-परिवार बोलने वालों की संख्या, क्षेत्रफल और साहित्यिकता की दृष्टि से सबसे बड़ा परिवार है और यह भारत से यूरोप तक फैला हुआ है। भारोपीय परिवार की दस शाखाएँ मानी गई है; जिनमें एक है भारत-ईरानी शाखा। भारत-ईरानी शाखा की भारतीय आर्यभाषा, ईरानी और दरदी उपशाखाएं हैं।

भारतीय-आर्य भाषाओं को काल की दृष्टि से तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है: (1) प्राचीन भारतीय आर्य-भाषाएँ (1500 ई.पू. तक)- संस्कृत आदि (2) मध्य भारतीय आर्य-भाषाएँ (500 ई.पू. से 1000 ई. तक) – पालि, प्राकृत, अपभ्रंश आदि और (3) आधुनिक भारतीय आर्य भाषाएँ (1000 ई. से आज तक) – हिन्दी, बंगाली, मराठी आदि। आधुनिक भारतीय-आर्य भाषाओं में हिन्दी भी एक मुख्य भाषा है। इसके विकास के इतिहास को भी तीन मुख्य कालों में बाँटा जा सकता है:

आदि काल (1000 ई. से 1500 ई. तक) : इस काल में अपभ्रंश तथा प्राकृत का प्रभाव हिन्दी पर था और उस समय हिन्दी का स्वरूप निश्चित रूप से स्पष्ट नहीं हो पाया था। इस काल में मुख्य रूप से हिन्दी की वही ध्वनियाँ (अर्थात् स्वर एवं व्यंजन) मिलती हैं जो अपभ्रंश में प्रयुक्त होती थीं। कुछ ध्वनियों का अलग से आगम हुआ है – जैसे – अपभ्रंश में 'ड़' और 'ढ़' व्यंजन नहीं थे किंतु आदिकालीन हिन्दी में ये ध्वनियाँ मिलती हैं। इसके अतिरिक्त 'च, छ, ज, झ' ध्वनियाँ संस्कृत से अपभ्रंश तक स्पर्श ध्वनियाँ थीं, किंतु हिन्दी में आकर ये ध्वनियाँ स्पर्श-संघर्षी-सी हो गई (हालांकि कुछ विद्वान इन्हें स्पर्श ध्वनियाँ ही मानते हैं)। संस्कृत और अरबी-फ़ारसी के शब्दों के आ जाने के कारण कुछ नए व्यंजन

आ गए जो अपभ्रंश में नहीं थे। अपभ्रंश संयोगात्मकता से वियोगात्मकता की ओर मुड़ने लगी थी जिसे हिन्दी ने अपनाना आरंभ कर दिया। सहायक क्रियाओं और परसर्गों का प्रयोग अधिक होने लगा, जिससे हिन्दी का वियोगात्मक रूप और अधिक उभरने लगा। इसके अतिरिक्त वाक्य रचना में शब्दक्रम धीरे-धीरे निश्चित होने लगा और आदिकालीन हिन्दी में नपुंसक लिंग भी प्रायः समाप्त हो गया जो अपभ्रंश तक विद्यमान था। इसमें संस्कृत की तत्सम शब्दावली की वृद्धि हुई और मुसलमानों के आगमन से अरबी-फारसी तथा तुर्की शब्द भी आने लगे।

मध्यकाल (1500 ई. से 1800 ई. तक) : इस काल में अपभ्रंश का प्रभाव पूर्णतया समाप्त हो गया था और हिन्दी की सभी बोलियाँ विशेषकर ब्रज, अवधी और खड़ीबोली स्वतंत्र रूप में प्रयुक्त होने लगी थीं। इसमें शब्दांत में मूल व्यंजन के बाद 'अ' का लोप होने लगा – जैसे 'राम' का उच्चारण 'राम्' हो गया। न केवल यही, दीर्घ स्वर से संयुक्त व्यंजन के पहले अक्षर में भी 'अ' का लोप होने लगा; जैसे – जनता - जन्ता। अरबी-फारसी के प्रभाव से उच्चवर्ग की हिन्दी में 'क़', ख़, ग़, ज़, फ़' पाँच नए व्यंजनों का आगम हुआ।

इस काल में भाषा आदिकालीन हिन्दी की अपेक्षा अधिक वियोगात्मक हो गई। सहायक क्रियाओं और परसर्गों का प्रयोग और भी बढ़ गया। भक्ति-आंदोलन के अत्यधिक प्रभाव के कारण तत्सम शब्दों की अत्यधिक वृद्धि भी हुई। इसके साथ-साथ अरबी-फारसी आदि आगत शब्दों की संख्या भी काफी बढ़ी। न केवल यही, यूरोप से संपर्क हो जाने के कारण पुर्तगाली, स्पेनी, फ्रांसीसी और अंग्रेजी के भी कमीज़, तौलिया, पिस्तौल, नीग्रो, कूपन, कारतूस, कोट, स्वेटर, माचिस, सिगरेट आदि कई शब्द आ गए। इसी काल में दक्खिनी हिन्दी का भी विकास हुआ जो हैदराबाद दक्षिण (गोलकुंडा, बीदर, गुलबर्गा आदि) में प्रचलित हुई।

आधुनिक काल (1800 ई. से अब तक) : साहित्य के क्षेत्र में खड़ीबोली का व्यापक प्रचार होने के कारण हिन्दी की अन्य बोलियाँ लगभग दब गईं। यह बात अलग है कि अपने-अपने प्रदेशों में इनका प्रयोग अब भी जारी है लेकिन उन पर भी खड़ीबोली का प्रभाव है। इसके अतिरिक्त अंग्रेजी के प्रभाव के कारण अरबी-फारसी की 'क़', 'ख़', और 'ग़' ध्वनियों का प्रयोग बहुत कम हो गया है लेकिन 'ज़' एवं 'फ़' का प्रयोग और अधिक बढ़ गया है। अंग्रेजी शिक्षा के प्रचार से शिक्षित वर्ग में 'ऑ' ध्वनि का आगम हुआ है; जैसे – डॉक्टर, कॉलिज, ऑफिस।

इस काल में हिन्दी पूर्णतया वियोगात्मक भाषा बन गई है। इसके व्याकरण का मानक रूप काफी सुनिश्चित हो गया है। हिन्दी जहाँ संस्कृत के अतिरिक्त अरबी-फारसी से काफी प्रभावित रही है, वहाँ प्रेस, रेडियो और सरकारी काम-काज में अंग्रेजी का अत्यधिक प्रयोग होने के कारण हिन्दी की वाक्य-रचना और मुहावरे-लोकोक्तियों में अंग्रेजी का बहुत प्रभाव पड़ा है। स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद हिन्दी को सरकारी काम-काज की राजभाषा बनाने तथा विज्ञान, वाणिज्य आदि में प्रयोजनमूलक कार्य करने के कारण इसकी पारिभाषिक शब्दावली में अत्यधिक वृद्धि हुई है और अभी भी हो रही है। इस प्रकार शब्द-संपदा के समृद्ध होने से हिन्दी अपनी अभिव्यक्ति में अधिक समर्थ और गहरी होती जा रही है।

हिन्दी शब्द का उद्‌भव संस्कृत शब्द 'सिंधु' से माना गया है। यह सिंधु नदी के आस-पास की भूमि का नाम है। ईरानी 'स' का उच्चारण प्रायः 'ह' होता है, इसलिए 'सिंधु' का रूप 'हिन्दू' हो गया और बाद में 'हिन्द' हो गया। इसका अर्थ हुआ 'सिंध प्रदेश'। बाद में 'हिन्द' शब्द पूरे भारत के लिए प्रयुक्त होने लगा। इसमें ईरानी का 'इक' प्रत्यय लगने से 'हिन्दीक' शब्द बना, जिसका अभिप्राय है 'हिन्दू का'। कहा जाता है कि इसी 'हिन्दी का' शब्द से यूनानी शब्द 'इंदिका' और वहीं से अंग्रेजी' शब्द 'इंडिया' बना है। विद्वानों के मतानुसार 'हिन्दीक' से 'क' शब्द के लोप हो जाने से 'हिन्दी' शब्द रह गया जिसका मूल अर्थ 'हिन्द का' होता है।

छठी शताब्दी के कुछ पहले ईरान में भारत की भाषाओं के लिए 'जुबान-ए-हिन्दी' का प्रयोग होता था। ईरान के प्रसिद्ध बादशाह नौशेरवाँ (531-579 ई.) ने अपने एक विद्वान हकीम बजरोया को 'पंचतंत्र' का अनुवाद कर लाने के लिए भारत भेजा था। बजरोया ने अपने अनुवाद में 'कर्कटक और दमनक' का 'कलीला और दिमना' नाम रखा। नौशेरवाँ के मंत्री बुजर्च मेहर ने इसकी भूमिका लिखते हुए इस अनुवाद को 'ज़ुबान-ए-हिन्दी' से किया हुआ कहा है। यहाँ 'जुबान-ए-हिन्दी' से अभिप्राय भारतीय भाषा अर्थात् संस्कृत से है। इसके बाद पद्य और गद्य में कई अनुवाद हुए और इन सभी अनुवादों में मूल पुस्तक को 'जुबान-ए-हिन्दी' ही कहा गया। संस्कृत के लिए यह नाम दसवीं शताब्दी तक चलता रहा। इसके पश्चात् 1227 ई. में मिनहाजुस्सिराज ने अपनी पुस्तक 'तबकाते नासिरी' में 'जबान-ए-हिन्दी' के संदर्भ में विहार का अर्थ 'मदरसा' रखा। इससे यह संकेत मिलता है कि इस काल में 'जुबान-ए-हिन्दी' का प्रयोग संस्कृत के लिए न होकर भारतीय भाषा या भारत के मध्य भाग अर्थात् मध्यदेशीय बोलियों के लिए हो रहा था।

14वीं शताब्दी में 'हिन्दी' शब्द का प्रयोग एक ही भाषा के लिए होने लगा। सन् 1333 ई. में इब्न बतूता ने अपने 'रेहला इब्न बतूता' में 'किताबत अलाबज अलजदरात विल हिन्दी' अर्थात् 'कुछ दीवारों पर हिन्दी में लिखा था', उल्लेख किया है। सन् 1424 ई. में तैमूरलंग के पोते के शासनकाल में शरफुद्दीन यज़्दी के 'ज़फरनामा' में 'हिन्दी' शब्द मिलता है। इस प्रकार विदेश में यह हिन्दी के लिए 'हिन्दी' शब्द का प्रथम प्रयोग माना जाता है। हिन्दी शब्द का प्रयोग वस्तुतः विदेश में मुसलमानों ने किया था।

भारतीय परंपरा में 'प्रचलित भाषा' के लिए प्राचीन काल से ही 'भाषा' शब्द का प्रयोग होता आया है जो क्रमशः संस्कृत, प्राकृत और बाद में हिन्दी के लिए प्रयुक्त हुआ है। कबीर, जायसी, तुलसी आदि ने अपने साहित्य में प्रयुक्त भाषा को 'भाषा' की संज्ञा दी है जबकि वह हिन्दी थी; जैसे –

'संस्कृत कबिरा कूप-जल भाषा बहता नीर। – कबीर

आदि अंत जसि कथ्था अहै, लिखि भाषा चौपाई कहे। – जायसी

भाषा भनति मोर मति थोरी। – तुलसी

फोर्ट विलियम कॉलिज में हिन्दी के अध्यापक के लिए 'भाषा मुंशी' का प्रयोग हुआ है। यह 'भाषा' शब्द बाद में 'भाखा' के रूप में भी प्रयुक्त होता रहा जो आधुनिक काल तक चलता रहा। वास्तव में 'भाखा' शब्द ब्रजभाषा के लिए रूढ़ हो गया।

विद्वानों के मतानुसार भारत में 'हिन्दी' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम अमीर खुसरो ने किया था – 'जुज़्बे चंद नज़मेंं हिन्दी नीज़ नज़ेदोस्तां करदा शुदा अस्त'। बाद में 'खालिकबारी' कोश में इसका प्रयोग कई बार हुआ है। यह भी उल्लेखनीय है कि 'हिन्दी' की अपेक्षा 'हिन्दवी' शब्द अधिक प्राचीन है। हिन्दी, हिन्दवी शब्द का प्रयोग अमीर खुसरो ने भी कई स्थलों पर किया है। एक स्थान पर वे कहते हैं – 'तुर्क हिन्दुस्तानिम मन हिन्दवी गोयम जवाब' अर्थात् 'हिन्दुस्तानी तुर्क हूँ, हिन्दवी में जवाब देता हूँ।' यह भी तर्क दिया जाता है कि हिन्दी शब्द का प्रयोग पहले भारतीय मुसलमानों के लिए होता था और 'हिन्दवी' शब्द मध्यदेशीय भाषा के संदर्भ में। यह 'हिन्दवी' शब्द वस्तुतः हिन्दवी या हिन्दुई है। कुछ विद्वान इसे हिन्दुओं की भाषा भी कहते हैं – (हिन्दू + ई अर्थात् हिन्दुओं की भाषा) बाद में यह हिन्दवी शब्द हिन्दी भाषा के लिए प्रयुक्त होने लगा। इस दृष्टि से 'हिन्दवी' शब्द पुराना है और 'हिन्दी' अपेक्षाकृत बाद का। तुलसी के 'फारसी पंचनामे', जटमल की 'गोरा बादल की कथा' तथा इंशा अल्ला खां की 'रानी केतकी की कहानी' में भी केवल हिन्दवी शब्द समानार्थी हो गए। 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक हिन्दवी 'भाखा' या भाषा के संदर्भ में प्रयुक्त होती रही। हातिम के 'दीवानज़ादे' के दोबाचे में लिखा है 'जबान दर दार ता बहिन्दवी कि आरां माका गोयन्द'। इससे स्पष्ट होता है कि 'हिन्दवी' और 'भाखा' प्रायः

एक ही अर्थ में प्रयुक्त होते थे किंतु हिन्दवी या हिन्दी का नाम अकबर की शासनकालीन स्वीकृत भाषाओं में उपलब्ध नहीं होता। अमीर खुसरो के ग्रंथ 'नुहसिपर' में उस काल की जिन ग्यारह भाषाओं-सिंधी, लाहौरी, कश्मीरी, गौड़ी, तिलंगी, मारवाड़ी, गुजराती, मराठी, कर्नाटकी, बंगाली, सिंधी, अफगानी-बलूचिस्तानी मिलते हैं उनमें भी हिन्दी या हिन्दवी का उल्लेख नहीं है। किंतु ऐसा माना जाता है कि अमीर खुसरो और अबुल फजल ने 'देहलवी' भाषा का भी उल्लेख किया है। वह मध्यदेशीय भाषा या हिन्दी से ही अभिप्रेत है। इस दृष्टि से यह कह सकते हैं कि हिन्दवी या हिन्दी शब्द कदाचित् साहित्य तक सीमित हो।

हिन्दवी या हिन्दी शब्द के अविच्छिन्न प्रयोग की परंपरा दक्खिनी कवियों और गद्यकारों में भी पाई जाती है। हज़रत बंदेनवाज़ गेसूदराज, शाह बुरहानुद्दीन जानम, मीराजुं शम्सुल इश्शाक, मुल्ला वजही आदि दक्खिनी साहित्यकारों ने अपनी कृतियों में हिन्दवी या हिन्दी शब्द का प्रयोग किया है। वास्तव में दक्षिण भारत में हिन्दी को 'दक्खिनी' कहा जाता था। पूर्व और पश्चिम भारत में हिन्दी 'भाखा' के नाम से विख्यात थी। 18वीं शताब्दी तक आते-आते 'हिन्दी' नाम ने अपना स्थायी रूप ले लिया। 19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक उर्दू के लेखकों में प्रायः हिन्दी का प्रयोग उर्दू या रेख्ता के समानार्थी के रूप में चलता था, किंतु आज 'हिन्दी' शब्द विवादास्पद बन गया है।

यह प्रश्न प्रायः उठता है कि उर्दू एक अलग भाषा है या हिन्दी की एक शैली है। हिन्दुस्तानी शब्द से क्या तात्पर्य है? क्या यह हिन्दी-उर्दू दोनों का सामान्यीकृत रूप है और बोलचाल की भाषा के रूप में बोली जाती है? इसलिए इन तीनों शब्दों – हिन्दी, हिन्दुस्तानी, और उर्दू की व्युत्पति के बारे में जानने के बाद हिन्दी के स्वरूप को सही परिप्रेक्ष्य में देखा जा सकता हैः

उर्दू : 'उर्दू' शब्द तुर्की भाषा का है जिसका अर्थ है 'शाही शिविर' या 'खेमा'। जब मुगल बादशाह भारत आए तो उन्होंने यहाँ बड़े-बड़े फौजी पड़ाव डाले जिन्हें 'उर्दू-ए-मुअल्ला' कहा जाता था। स्थानीय लोगों से परस्पर संप्रेषण करते-करते इनकी भाषा अरबी-फारसी-तुर्की में पंजाबी, बाँगरू, कौरवी, ब्रज आदि का मिश्रण होने लगा, जिससे एक नए भाषा-रूप का विकास हुआ। इस नए भाषा रूप को 'ज़ुबान-ए-मुअल्ला' कहा गया। बाद में इसका संक्षिप्त रूप 'उर्दू' हो गया। कुछ लोग इसे 'हिन्दी' या 'रेख्ता' भी कहते हैं। इस प्रकार उर्दू और हिन्दी में कोई भेद नहीं है किंतु अलगाव की प्रवृत्ति आने से उर्दू में अरबी-फारसी शब्दों, मुहावरों आदि का अधिकाधिक प्रयोग किया गया और अरबी-फारसी लिपि को अपनाया गया जिससे इसे अलग रूप देने का प्रयास किया गया जबकि इन दोनों का व्याकरण एक ही है। वास्तव में उर्दू एक ओर हिन्दी की एक विशिष्ट शैली है किंतु दूसरी ओर इसने एक विशिष्ट साहित्यिक और सांस्कृतिक परंपरा का निर्माण भी किया है जिसे हिन्दी परंपरा के समानांतर रखा जा सकता है और इसी कारण इसकी अपनी भाषायी अस्मिता भी है।

हिन्दुस्तानी : 'हिन्दुस्तानी' शब्द 'हिन्दुस्तान' + 'ई' के योग से बना है। ग्रियर्सन, धीरेन्द्र वर्मा आदि कई विद्वानों का मत है कि इसका प्राचीन प्रयोग हिन्दवी, हिन्दुई या हिन्दुवी नाम से मिलता है। 13वीं शताब्दी में औफी और अमीर खुसरो ने इसका प्रयोग किया है। बाद में 'हिन्दवी' नाम उस भाषा के लिए सीमित हो गया जिसमें अरबी-फारसी के शब्दों का बाहुल्य था। बाद में हिन्दुस्तानी हिन्दी, उर्दू के बीच की भाषा मानी जाने लगी जिसमें सरल शब्दावली थी। इसमें संस्कृत तथा अरबी-फारसी के तद्भव रूप थे जो जनसाधारण की भाषा में खप गए। गांधीजी जैसे कई मनीषियों ने हिन्दुस्तानी शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में किया था। वास्तव में हिन्दी-उर्दू भाषा को सांप्रदायिकता से जोड़ कर मज़हबी भाषा बनाने का जो कुप्रयास हुआ, उसे मिटाने के लिए महात्मा गांधी जैसे राजनेता और प्रेमचंद जैसे साहित्यकार ने हिन्दुस्तानी को अपनाया। इस प्रकार हिन्दुस्तानी हिन्दी की बोल चाल का एक सरल रूप है जो भाषा की प्रकृति से जुड़ी स्वाभाविक शैली है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हिन्दी और उर्दू के स्रोत क्रमशः संस्कृत और अरबी-फारसी हैं। यदि संस्कृत और अरबी-फारसी के शब्दों की बहुलता न हो तो इन दोनों भाषाओं में कोई अंतर नहीं होगा। इन दोनों का सामान्यीकृत रूप ही 'हिन्दुस्तानी' कहलाता है। वास्तव में प्रारंभ में 'हिन्दी' शब्द का प्रयोग हिन्दी और उर्दू दोनों के लिए होता था – 'दर जुबान-ए-हिन्दी की मुराद उर्दू अस्त'। बाद में अंग्रेजों ने पृथकतावादी नीति के कारण ऐसी भाषा-नीति अपनाई जिसमें हिन्दी और उर्दू को अलग-अलग माना गया। इन दोनों भाषाओं का व्याकरण भी कलकत्ता के फोर्ट-विलियम कॉलिज में डॉ. गिलक्राइस्ट के निर्देशन में अलग-अलग लिखा गया।

1.6 हिन्दी भाषा का स्वरूप और क्षेत्र

आज 'हिन्दी' शब्द का प्रयोग मुख्यतः तीन संदर्भ में हो रहा है:

1. भौगोलिक संदर्भ 2. साहित्यिक संदर्भ 3. प्रयोग-विस्तार का संदर्भ

भौगोलिक संदर्भः हिन्दी का क्षेत्र बिहार, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान, मध्य प्रदेश, दिल्ली तथा पंजाब के कुछ भाग तक फैला हुआ है। इन्हें हिन्दी-भाषी प्रदेश भी कहा जाता है। हिन्दी को पाँच वर्गों अथवा उपभाषाओं में बाँटा गया है जिनके अंतर्गत 18 मुख्य बोलियाँ आती हैं। ये वर्ग हैं – पश्चिमी हिन्दी, पूर्वी हिन्दी, बिहारी, राजस्थानी और पहाड़ी। यह वर्गीकरण जार्ज ग्रियर्सन द्वारा किया गया है, जो भ्रामक और अवैज्ञानिक माना गया है क्योंकि ग्रियर्सन ने ऐतिहासिक दृष्टि से व्याकरणिक समानता को देखा और उसके कारण परस्पर बोधगम्यता तथा साहित्य और संस्कृति के आधार पर उसकी जातीय अस्मिता को ध्यान में रखा न कि भाषा और बोली के विभेदक लक्षणों को। इन विभेदक लक्षणों में जातीय अस्मिता और जातीय बोध की अवधारणा निहित है। इन वर्गों के अंतर्गत तीन-चार बोलियाँ आती हैं जिनका विवरण इस प्रकार है:

- पश्चिमी हिन्दी – खड़ीबोली (या कौरवी), ब्रजभाषा, हरियाणवी (या बाँगरू), कनौजी और बुंदेली।
- पूर्वी हिन्दी – अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी।
- बिहारी – भोजपुरी, मगही और मैथिली
- राजस्थानी – जयपुरी, मारवाड़ी, मेवाती और मालवी।
- पहाड़ी – पश्चिमी पहाड़ी (हिमाचली) और मध्यवर्ती पहाड़ी (कुमायूंनी-गढ़वाली)।

इन सभी बोलियों को आरेख में दिया गया है। इनका संक्षिप्त परिचय नीचे दिया जा रहा है।

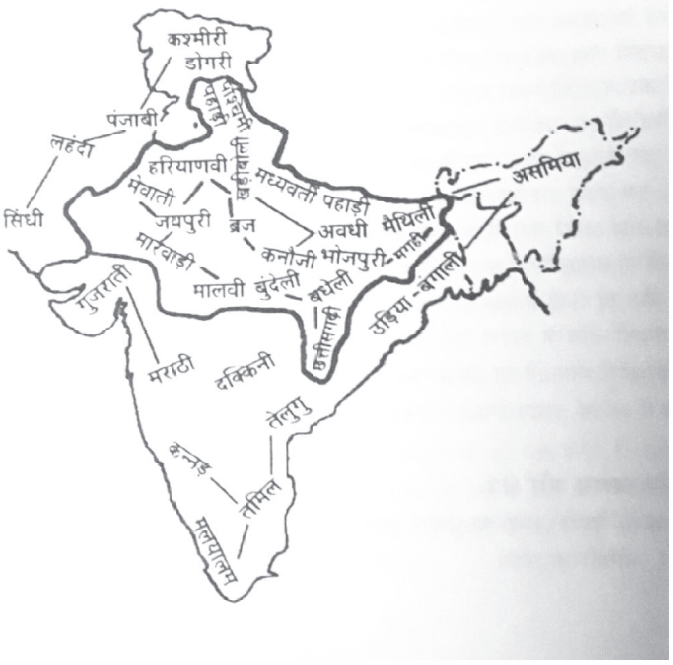

खड़ीबोली : 'खड़ीबोली' का विकास शौरसेनी अपभ्रंश के उत्तरी रूप से हुआ है। इसमें 'खड़ी' शब्द 'खड़ी पाई' की अधिकता के कारण (जैसे आया, बड़ा, लड़का आदि) तथा ध्वनि में कर्कशता के कारण जोड़ते हैं। कुछ विद्वानों ने इसका प्रयोग कौरवी बोली के रूप में किया है क्योंकि इसका संबंध कुरु प्रदेश से है। सामान्य बोलचाल में इसे हिन्दुस्तानी भी कहा जाता है। यह बोली मुख्यतः देहरादून के मैदानी भाग, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ, दिल्ली, गाजियाबाद, बिजनौर, मुरादाबाद, रामपुर तथा आस-पास के क्षेत्रों में बोली जाती हैं।

खड़ीबोली के दो रूप हो गए हैं – एक हिन्दी और दूसरा उर्दू। हिन्दी में संस्कृत शब्दों की प्रधानता और उर्दू में अरबी-फारसी के शब्दों की भरमार है। इन भाषाओं के भेद का कारण लिपि भी है। हिन्दी देवनागरी लिपि में लिखी जाती है और उर्दू अरबी-फारसी लिपि में। साहित्यिक रूप और लिपि के इन दोनों कारणों को हटा दिया जाए तो इन दोनों में कोई विशेष अंतर दिखाई नहीं देगा। इसीलिए हिन्दी और उर्दू को एक ही भाषा (हिन्दी-उर्दू) की साहित्यिक बोलियाँ कहा गया है। खड़ीबोली पहले एक बोली के रूप में थी, लेकिन बाद में इसका अत्यधिक प्रसार, परिष्कार और विकास हुआ जिससे यह आज संपूर्ण भारत की राजभाषा और संपर्क भाषा के रूप में अभिमंडित है। वर्तमान काल में यह साहित्य-भाषा और शिक्षा के माध्यम की भाषा के रूप में प्रयुक्त हो रही है।

ब्रजभाषा : ब्रज भाषा का विकास शौरसेनी अपभ्रंश के मध्यवर्ती रूप से हुआ है। साहित्य और लोक साहित्य की दृष्टि से ब्रजभाषा का बहुत ही महत्व है। मध्यकाल में साहित्य-भाषा के रूप में इसका प्रसार एवं प्रचार गुजरात से लेकर बंगाल तक था। आज इसका स्थान खड़ीबोली ने ले लिया है। इस भाषा के प्रसिद्ध कवि सूरदास, नंददास, रहीम, रसखान, बिहारी, देव, रत्नाकर आदि हुए। यह बोली मथुरा, आगरा, अलीगढ़, मैनपुरी, एटा, बदायूँ तथा आस-पास के क्षेत्रों में बोली जाती है।

हरियाणवी : हरियाणवी बोली हरियाणा राज्य में, दिल्ली के ग्रामीण क्षेत्रों में और पटियाला के आस-पास बोली जाती है। इसका शौरसेनी और पंजाब की सीमा के साथ लगे रहने के कारण इस पर राजस्थानी और पंजाबी का प्रभाव पाया जाता है। यह खड़ीबोली से काफी मिलती-जुलती है। हरियाणवी के लोक साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है, यद्यपि साहित्यिक रूप बहुत ही कम है।

कनौजी : इस बोली का केंद्र कनौज है। इसका क्षेत्र अवधी और ब्रजभाषा के बीच में पड़ता है। यह मुख्यतः फरूखाबाद, इटावा, शाहजहाँपुर, कानपुर, पीलीभीत, हरदोई आदि क्षेत्रों में बोली जाती है। इसका विकास भी शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है। यह ब्रजभाषा से काफी मिलती-जुलती है। कनौजी का लोक साहित्य काफी उत्कृष्ट है किंतु साहित्यिक रूप बहुत ही कम मिलता है।

बुंदेली : मध्य प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश की सीमा के आस-पास के क्षेत्र को बुंदेलखंड कहते हैं। इस क्षेत्र की बोली को बुंदेली या बुंदेलखंडी कहा जाता है। इस बोली का विकास भी शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है। बुंदेली लोक साहित्य काफी समृद्ध है जिसमें 'इसुरी के फाग' प्रसिद्ध हैं। बुंदेली और ब्रजभाषा में काफी समानता मिलती है। यह झाँसी, हमीरपुर, ग्वालियर, सागर, ओरछा, होशंगाबाद तथा आस-पास के क्षेत्रों में बोली जाती है।

अवधी : यह अयोध्या अर्थात् अवध के आस-पास बोली जाती है। इसका क्षेत्र लखनऊ, उन्नाव, रायबरेली, सीतापुर, सीरी, फैजाबाद, बहराइच, सुलतानपुर, प्रतापगढ़, और बाराबंकी तक फैला हुआ है। इसके अतिरिक्त यह इलाहाबाद, मिर्ज़ापुर, फतेहपुर, जौनपुर आदि के कुछ भागों में भी बोली जाती है। अधिकतर विद्वान इसका विकास अर्द्ध-मगधी अपभ्रंश से मानते हैं। अवधी में साहित्य और लोक साहित्य दोनों काफी मात्रा में उपलब्ध है। इसके प्रसिद्ध कवि जायसी, गोस्वामी तुलसीदास, कुतुबन, उसमान आदि हैं।

बघेली : अवधी के दक्षिण में बघेली का क्षेत्र है। इसका केंद्र रीवाँ तथा आस-पास का इलाका है किंतु यह दमोह, जबलपुर, मांडला और बालाघाट के जिलों तक भी फैली हुई

है। इसका विकास भी अर्द्ध-मगधी अपभ्रंश से माना गया है। यह बोली अवधी के काफी निकट है।

छत्तीसगढ़ी : इसका मुख्य केन्द्र छत्तीसगढ़ होने के कारण इसे छत्तीसगढ़ी कहा जाता है। इसे लरिया या खल्ताही भी कहते हैं। इसका क्षेत्र रायपुर, बिलासपुर, सरगुजा, रायगढ़, कौरिया, खैरागढ़, दुर्ग, नंदगाँव, कांकेर आदि तक फैला हुआ है। इसका विकास भी अर्द्ध-मगही से हुआ है। छत्तीसगढ़ी में मुख्यतः लोक साहित्य उपलब्ध है।

भोजपुरी : यह प्राचीन काशी जनपद की बोली है। बिहार के शाहबाद जिले के भोजपुर कस्बे के नाम पर इस बोली का नाम 'भोजपुरी' पड़ा हैः हालांकि इसका क्षेत्र बहुत बड़ा है। यह बोली बनारस, मिर्जापुर, जौनपुर, गाजीपुर, बलिया, गोरखपुर, देवरिया, बस्ती, आजमगढ़, शाहबाद, चंपारन, सारण, सीवान, बक्सर तथा आस-पास के क्षेत्रों में प्रयुक्त होती है। इसका विकास मागधी अपभ्रंश के पश्चिमी रूप से माना जाता है। इसमें अधिकतर लोक साहित्य मिलता है।

मगही : मगही गंगा के दक्षिण में पटना और गया जिलों तथा हजारीबाग और भागलपुर के कुछ हिस्सों में बोली जाती है। इसका नाम संस्कृत के 'मगध' शब्द के अपभ्रंश रूप 'मगह' पर आधारित है और यह मागधी अपभ्रंश से विकसित हुई है। इसका लोक साहित्य पर्याप्त मात्रा में मिलता है।

मैथिली : मैथिली का क्षेत्र गंगा के उत्तर में दरभंगा, सहरसा, समस्तीपुर, पूर्णिया जिलों तथा मुजफ्फरपुर जिले के पूर्वी भाग तक फैला हुआ है। वास्तव में यह मागधी अपभ्रंश के मध्यवर्ती रूप से विकसित होकर हिन्दी और बंगाली क्षेत्र के संधि-स्थल पर मिथिला में बोली जाती है। मैथिली का लोक साहित्य काफी समृद्ध है। इसके अतिरिक्त इसमें साहित्य-रचना प्राचीन काल से होती चली आई है। इसके प्रसिद्ध कवि विद्यापति हुए हैं। इसकी अपनी लिपि है जो बंगाली लिपि से मिलती-जुलती है। इस बोली को संविधान की आठवीं अनुसूची की मुख्य भाषाओं में स्थान दिया गया है।

जयपुरी : राजस्थान के पूर्वी भाग में जयपुरी बोली जाती है। इसी के साथ हाड़ौती भी बोली जाती है। जयपुरी बोली का विकास शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है। इसको ढूँढाणी भी कहते हैं। इसमें लोक साहित्य काफी रचा गया है। इसका क्षेत्र जयपुर, अजमेर, कोटा तथा बूंदी तक फैला हुआ है।

मारवाड़ी : इसका विकास भी शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है। पुरानी मारवाड़ी को डिंगल भी कहते हैं। यह पश्चिमी राजस्थान अर्थात् जोधपुर, उदयपुर, जैसलमेर, बीकानेर, मेवाड़, आदि में बोली जाती है। मारवाड़ी में लोक साहित्य पर्याप्त मात्रा में मिलता है और साहित्य की दृष्टि से मीरा के पद इसी में लिखे गए हैं।

मेवाती : इसका क्षेत्र उत्तरी राजस्थान के अलवर, भरतपुर, तथा हरियाणा के गुड़गाँव जिले के आस-पास है। यह नाम 'मेओ' जाति के इलाके मेवात के नाम पर पड़ा है। इसका विकास भी शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है। इसमें केवल लोक साहित्य उपलब्ध है।

मालवी : यह राजस्थान के दक्षिणी क्षेत्र मालवा और उसके आस-पास बोली जाती है। इसके अन्य क्षेत्र इंदौर, उज्जैन, रतलाम, होशंगाबाद आदि हैं। यह बोली शौरसेनी अपभ्रंश से विकसित हुई है। इसमें भी पर्याप्त लोक साहित्य मिलता है।

पश्चिमी पहाड़ी (हिमाचली) : इसका विकास शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है और इसमें लोक साहित्य काफी मात्रा में मिलता है। पश्चिमी पहाड़ की बोलियाँ हिमाचल प्रदेश के शिमला, कुल्लू, मंडी, कांगड़ा, चंबा, आदि हैं। इसकी कांगड़ी, मड़ियाली, चंबआली, कुलंबी, सिरमौरी, क्योथली, बघाटा आदि कई उपबोलियाँ हैं। इन उपबोलियाँ के समग्र रूप को 'हिमाचली बोली' भी कहते हैं।

गढ़वाली : यह मध्यवर्ती पहाड़ी बोली है जिसका मुख्य क्षेत्र उत्तराखंड प्रदेश के गढ़वाल और उसके आस-पास का इलाका है। यह गढ़वाल तथा मसूरी के निकटवर्ती पहाड़ी

प्रदेश में बोली जाती है। यह बोली भी शौरसेनी अपभ्रंश से विकसित हुई और इसका लोक साहित्य पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है।

कुमायूँनी : यह मध्यवर्ती पहाड़ी बोली है जो उत्तराखंड प्रदेश के नैनीताल, अलमोड़ा के निकटवर्ती पहाड़ी इलाकों में बोली जाती है। यह बोली भी शौरसेनी अपभ्रंश से विकसित हुई है और इसका लोक साहित्य भी काफी समृद्ध है।

कुछ विद्वानों ने उपर्युक्त बोलियों के अतिरिक्त निमाड़, हाड़ौली, अंगिका को भी मुख्य बोली के रूप में स्वीकार किया है। इनका अध्ययन करने से हम देखते हैं कि हिन्दी का विकास शौरसेनी, अर्द्ध-मागधी और मागधी अपभ्रंश से हुआ है। यद्यपि इसके कुछ रूप पालि- प्राकृत में मिल जाते हैं किंतु इसका विकसित रूप अपभ्रंश के बाद ही माना जाता है।

साहित्यिक संदर्भ : इसमें साहित्य अथवा काव्य क्षेत्र में मैथिली, राजस्थानी (मारवाड़ी), ब्रजभाषा, अवधी तथा खड़ीबोली आते हैं। इन बोलियों में हिन्दी के पद्य और गद्य की रचना हुई है। इन बोलियों के प्रतिनिधि कवि एवं साहित्यकार विद्यापति, चंदबरदाई, तुलसीदास, सूरदास, बिहारी, अमीर खुसरो, भारतेंदु हरिश्चंद्र, जयशंकर प्रसाद, प्रेमचंद, रामचंद्र शुक्ल, अज्ञेय आदि हैं।

प्रयोग-विस्तार का संदर्भ : यह खड़ीबोली से विकसित साहित्य और मानक भाषा है जिसमें हिन्दी की अन्य बोलियों और कई भाषाओं का भी योगदान है। इसका प्रयोग संघ की राजभाषा के रूप में हो रहा है। खड़ीबोली का यह मानक रूप क्षेत्र-निरपेक्ष और सार्वदेशिक है जो समूचे भारत में बोली और समझी जाती है।

इस प्रकार हिन्दी का क्षेत्र बिहार, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान, मध्यप्रदेश, दिल्ली, उत्तराखंड और छत्तीसगढ़ तक फैला हुआ है। इन्हें हिन्दी भाषी क्षेत्र कहा जाता है। इन प्रदेशों की सीमाएँ पश्चिमी बंगाल, उड़ीसा, महाराष्ट्र, गुजरात और पंजाब राज्यों के साथ जुड़ी हुई हैं। यह महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब, अंडमान-निकोबार और गोवा प्रदेशों में द्वितीय भाषा के रूप में प्रयुक्त होती है।

बोध प्रश्न 3

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

1. हिन्दी शब्द का प्रयोग किन संदर्भों में होता है? इसे उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

   .....

   .....

   .....

2. हिन्दी को किन पाँच वर्गों में विभाजित किया गया है। उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

   .....

   .....

   .....

3. हिन्दी की कितनी मुख्य बोलियाँ है? इनके नाम बताइए।

   .....

   .....

   .....

   .....

4. पूर्वी हिन्दी की बोलियों के नाम बताइए।

.....

.....

.....

.....

.....

1.7 सारांश

इस प्रकार हम देखते हैं कि भाषा प्रतीकों की आंतरिक व्यवस्था है, जिसमें ध्वनिपरक एवं व्याकरणिक इकाइयाँ एक-दूसरे के साथ व्यवस्थित रूप में जुड़ी होती हैं। इससे अर्थ का बोधन होता है। ये भाषिक इकाइयाँ अपने-आप में स्वायत्त न होकर संरचनात्मक संबंधों के प्रकार्य के रूप में कार्य करती है। प्रत्येक व्यक्ति अपने अंतस में इन संबंधों के नियमों को जानता है जो उसके भीतर अज्ञात रूप से या सुषुप्त भाव से पड़े रहते हैं। वह अपनी सर्जनात्मक शक्ति के द्वारा उन नियमों के आधार पर ऐसे नए वाक्यों का निर्माण करता है, जो न कभी पहले बोले गए हों न कभी सुने गए हों। ये वाक्य व्याकरण और अर्थ के धरातल पर समझे जाते हैं। भाषा को विभिन्न संदर्भों में प्रयुक्त किया जाता है, जिससे उसके विविध रूप आते हैं, जैसे – व्यक्ति बोली, बोली, भाषा, राजभाषा, राष्ट्रभाषा, मानक भाषा, कृत्रिम भाषा, मृतभाषा।

इसी संदर्भ में हिन्दी भाषा को अपनी विकास यात्रा में कई पड़ावों से गुजरना पड़ा जिससे हिन्दी का स्वरूप निखरता गया। हिन्दी का एक व्यापक रूप स्थापित हो गया है जिसकी परिभाषा भौगोलिक, साहित्यिक और प्रयोग-विस्तार की दृष्टि से की जाती है। इस भाषा की अट्ठारह प्रमुख बोलियाँ मानी गई हैं। इसी व्यापकता के कारण यह भारत की राजभाषा के पद पर सुशोभित है।

1.8 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

i) 1. देखें इकाई 1.2

2. देखें इकाई 1.3

3. देखें इकाई 1.3

4. देखें इकाई 1.4

ii) क) (×)

ख) (✓)

ग) (✓)

घ) (✓)

ड.) (×)

बोध प्रश्न 2

1. क) देखें इकाई 1.4
   ख) देखें इकाई 1.4
   ग) देखें इकाई 1.4.7
   घ) देखें इकाई 1.4.4
2. देखें इकाई 1.4.2
3. हिन्दी, मराठी, बंगला, तमिल, गुजराती

बोध प्रश्न 3

1. देखें इकाई 1.6
2. देखें इकाई 1.6
3. देखें इकाई 1.6
4. अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 2 हिंदी की वर्ण-व्यवस्था : स्वर एवं व्यंजन

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 वर्ण और लिपि

2.3 वर्ण-विचार

2.4 वर्णमाला

2.4.1 स्वर वर्ण

2.4.2 व्यंजन वर्ण

2.5 वर्ण लिखने की रीति

2.6 वर्ण विच्छेद

2.7 स्वर एवं व्यंजन के उच्चारण स्थान

2.8 स्वर एवं व्यंजन के उच्चारण में होने वाले प्रयत्न

2.9 सारांश

2.10 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

2.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई इस पाठ्यक्रम की दूसरी इकाई है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- हिंदी की वर्ण-व्यवस्था के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे
- स्वर एवं व्यंजन वर्णों को लिखने की विधि को समझ सकेंगे
- वर्ण विच्छेद तथा वर्णों के उच्चारण स्थान बता सकेंगे जो शुद्ध उच्चारण हेतु सहायक होंगे
- स्वर तथा व्यंजन के उच्चारण में होने वाले प्रयत्न के बारे में सम्यक् व्याख्या कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

इस इकाई को पढ़ने से पहले आप हिंदी भाषा के विकास की जानकारी प्राप्त कर चुके हैं। आपने पालि, प्राकृत और अपभ्रंश, पुरानी हिंदी से होते हुए मैथिली, अवधी, ब्रजभाषा के विकास-क्रम में खड़ी बोली की यात्रा को भली-भाँति समझ लिया होगा।

आप यह जान चुके हैं कि हिंदी भाषा के विकास का इतिहास लगभग 1000 वर्षों का है। आदिकाल, मध्यकाल एवं आधुनिक काल में हिंदी के विकास की रूपरेखा से आप परिचित हो चुके हैं। इस इकाई में हम हिंदी की वर्ण व्यवस्था के अंतर्गत स्वर एवं व्यंजन वर्णों के विभिन्न पहलुओं से आपको परिचित कराने जा रहे हैं।

आप जानते हैं कि जिसके द्वारा मनुष्य अपने मन के विचार व्यक्त करता है उसे भाषा कहते हैं। अर्थात मनुष्य अपने मन के विचारों एवं भावों को भाषा के माध्यम से व्यक्त करता है। हम संकेतों से भी अपनी बात कह सकते हैं या सुन सकते हैं लेकिन इसे भाषा मानना उचित नहीं होगा। भाषा शब्द की व्युत्पत्ति हो तो स्पष्ट पता चलता है कि यह संस्कृत की 'भाष' धातु से उत्पन्न है। संस्कृत में 'भाष' का अर्थ कहना या बोलना होता है। अतः आप कह सकते हैं कि भाषा मन के भावों और विचारों के आदान-प्रदान का माध्यम है। भावों और विचारों के आदान-प्रदान हेतु जब हम बोलने का सहारा लेते हैं तो

यह मौखिक भाषा कहलाती है। लेकिन, अपने विचारों और भावों को लिखकर प्रकट किया जाए तो उसे लिखित भाषा के रूप में जाना जाता है। मौखिक रूप की तुलना में लिखित रूप भाषा को अधिक स्थायित्व प्रदान करता है। लिखित भाषा चाहे वह शिला लेख पर हो, ताड़पत्र, भुर्ज पत्र, ताम्र पत्र अथवा कागज पर छपे अक्षरों के रूप में हो लंबे समय तक सुरक्षित रहती है। मनुष्य के मुख से निकलने वाली वाणी को दीर्घकाल तक सुरक्षित रखने के लिए हमें भाषा के लिखित रूप का प्रयोग अनिवार्य प्रतीत होता है। ध्वनि संकेतों की व्यवस्था के रूप में भाषा जानी जाती है। इन्हीं ध्वनि संकेतों के लिए मनुष्य वर्णों का सहारा लेता है। समय की गति के साथ-साथ ये संकेत चिह्न भी बदलते रहते हैं। कहना न होगा कि भाषा वाक्यों से बनती है तो वाक्य पदों से सृजित होता है और पदों के लिए वर्णों का होना अत्यंत आवश्यक है। आइए, इस इकाई में हम वर्णों के विविध संदर्भों पर विचार करते हैं।

2.2 वर्ण और लिपि

वर्ण के कई अर्थ हैं। पदार्थों के लाल, काले आदि भेदों के नाम यानी रंग के अर्थ में वर्ण प्रयुक्त होता है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र जाति के संबंध में भी वर्ण का प्रयोग होता है। भेद, प्रकार, रूप, सूरत आदि अर्थों में भी वर्ण का हम प्रयोग करते रहते हैं। लेकिन, यहाँ वर्ण से हमारा आशय है अकारादि अक्षरों के चिह्न अथवा संकेत। वर्ण अक्षर भी कहलाता है। कभी आपने सोचा है कि वर्ण को अक्षर क्यों कहा जाता है? यह इसलिए कि वर्ण नित्य, अविनाशी, सदा एक-सा बने रहते हैं। अक्षर ब्रह्म होते हैं। बहरहाल, वर्ण को हम रचना की दृष्टि से अंग्रेजी के एल्फाबेट या लेटर के अर्थ में समझाना चाहते हैं। भाषा की सबसे छोटी इकाई वर्ण हैं और यह ध्वनियों के उच्चरित और लिखित दोनों रूपों के प्रतीक हैं। अर्थात् भाषा की वह छोटी-से-छोटी ध्वनि जिसके खंड न हो सके, वर्ण कहलाती है। लिखित भाषा को स्थायित्व प्रदान करने में वर्णों की भूमिका सर्वाधिक है। जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है वर्ण सांकेतिक होते हैं। किसी भी ध्वनि के लिए संकेत होता है। क्या आपने कभी इस मुद्दे पर सोचा है कि आपकी उच्चरित ध्वनि या ध्वनियों के लिए कोई विशेष संकेत क्यों होता है? इसका उत्तर जानने के लिए आपको लिपियों का विकास जानना आवश्यक है। यहाँ बस इतना जान लें कि हिंदी वर्णों को मूलतः देवनागरी लिपि में लिखा जाता है। देवनागरी या दूसरा नाम नागरी भी है। इसके अलावा महाजनी, कैथी, मारवाड़ी आदि लिपियों में भी हिन्दी का लेखन होता है। लेकिन छापे की लिपि देवनागरी होने के कारण उन लिपियों का उतना अधिक महत्व नहीं रह गया है। इधर विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास के कारण रोमन लिपि में हिंदी वर्ण लिखे जा रहे हैं। बताना जरूरी है कि हिंदी की प्रकृति और देवनागरी लिपि की प्रामाणिकता के सामने रोमन लिपि में हिंदी वर्ण कुछ हास्यास्पद प्रतीत होता है। हिंदी में जैसा बोला जाता है वैसा लिखा जाता है। साथ ही जैसा लिखा हुआ होता है वैसे पढ़ा जाता है। इसे पूरा करने की सामर्थ्य देवनागरी की है। रोमन लिपि में इस वैशिष्ट्य का अभाव है। एक उदाहरण से इसे स्पष्ट करने में सहज होगा। हिंदी में 'भाषा' उच्चरित होता है तो उसे 'भाषा' ही लिखा जाएगा जबकि रोमन में उसे Bhasha लिखा जाएगा। Bhasha को भास, भासा, भसा, भष, भषा, भाष, भाषा, भष आदि कई रूपों में पढ़ा जाएगा। अतः हिंदी वर्णों के लिए सर्वाधिक उपयुक्त, वैज्ञानिक और मानक लिपि देवनागरी ही है। इस लिपि का विकास ब्राह्मी लिपि से हुआ है जिसमें संस्कृत वर्णमाला के सभी वर्ण मिलते हैं। हिंदी के अलावा संस्कृत, मराठी, नेपाली आदि भाषाओं के लिए देवनागरी लिपि का उपयोग होता है।

2.3 वर्ण-विचार

भाषा में अनेकरूपता आ जाए तो विभिन्न प्रकार के भ्रम उत्पन्न होते हैं। ऐसी स्थिति में भ्रमों का निराकरण आवश्यक हो जाता है। भाषा का मानक रूप निश्चित करना पड़ता है। भाषा के शुद्ध रूपों और प्रयोगों के निरूपण की आवश्यकता होती है। इसके लिए

व्याकरण शास्त्र हमारी सहायता करता है। व्याकरण से ही भाषा के नियमों का परिचय मिलता है। भाषा का एक स्थिर रूप बनाने में व्याकरण का महत्व अस्वीकारा नहीं जा सकता है। भाषा के शुद्ध बोलने, लिखने, पढ़ने और समझने के नियमों का ज्ञान जिस शास्त्र से होता है उसे व्याकरण कहते हैं। इसलिए प्रत्येक भाषा का अपना व्याकरण होता है। भाषा को व्यवस्थित तथा मानक रूप प्रदान करने वाला शास्त्र व्याकरण है। हम यहाँ व्याकरण के संदर्भ में इसलिए बता रहे हैं कि वर्ण-विचार व्याकरण का एक अंग है। व्याकरण में भाषा के विभिन्न घटकों का अध्ययन किया जाता है। इन्हें निम्नलिखित शीर्षकों से जाना जा सकता हैः

क) वर्ण विचार (Orthography)

ख) शब्द विचार (Etymology)

ग) पद विचार

घ) वाक्य विचार (Syntax)

उपर्युक्त चार विभागों के अतिरिक्त दो और विभाग भी हिंदी व्याकरण में स्वीकृत हैं; चिह्न विचार और छंद विचार। आइए, अब हम वर्ण विचार (orthography) के क्षेत्र के बारे में चर्चा करें:

वर्ण विचार : जिस विभाग में वर्ण अथवा अक्षरों के आकार, उच्चारण, और उनके मेल से शब्द निर्माण की चर्चा होती है उसे वर्ण विचार कहा जाता है। वर्णों अथवा अक्षरों का स्वतः उच्चारण होता है। स्वर अपनी प्रकृति से अक्षर होते ही हैं लेकिन व्यंजन वर्णों में भी रहते हैं। जैसे 'अ' वर्ण 'क्' के साथ मिलकर 'क' बनता है। ध्यान से देखा जाए तो वर्ण विचार शुद्ध भाषा प्रयोग के लिए परम आवश्यक ही नहीं सर्वप्रथम विभाग भी है। वर्णों को पहचानने के लिए जो कल्पित चिह्न या संकेत निर्धारित होते हैं, उनके आकार एवं उच्चारण आदि के बारे में जानकारी हासिल करना जरूरी है।

इस संदर्भ में एक सवाल उठता है कि ऐसी जानकारी से भाषाई शुद्धता का क्या संबंध है? 'लता' एक शब्द है। वर्ण विचार करें तो यह केवल दो वर्णों से बना शब्द नहीं बल्कि ल्, अ, त्, आ चार वर्णों के मेल से बना शब्द है। अतः बिना वर्ण विचार की समझ से व्याकरण तथा भाषा की सही जानकारी नहीं हो सकती है। वर्ण विचार के अतिरिक्त शब्द विचार, पद-विचार और वाक्य विचार भी भाषा तथा व्याकरण के अन्य घटक हैं। शब्दों की व्युत्पत्ति, रचना तथा भेद आदि के नियमों का उल्लेख शब्द विचार के अंतर्गत होता है तो पद-भेद, रूपांतर एवं प्रयोग संबंधी नियम, पद विचार एवं वाक्य भेद, वाक्य के अंग-उपांग आदि पर विचार वाक्य विचार के अंतर्गत किया जाता है। इसी तरह पूर्ण विराम, अल्प विराम, कोलोन, सेमीकोलोन, डैश, अर्द्ध विराम, कोष्ठक आदि चिह्नों का प्रयोग चिह्न विचार के अंतर्गत है। छंद विचार में छंद के नियम आदि मालूम होते हैं। लेकिन, इसका संबंध केवल पद्य से है। इन विषयों में यदि आपकी रुचि हो और अधिक जानकारी प्राप्त करनी हो तो आप कोई भी भाषा विज्ञान की स्तरीय पुस्तक पढ़ सकते हैं।

2.4 वर्णमाला

वर्णों के समूह को वर्णमाला कहते हैं। प्रत्येक भाषा में सारे वर्णों के क्रमबद्ध समूह होते हैं। हिंदी में भी वर्णों अथवा अक्षरों के समूह क्रमबद्ध रूप में पाये जाते हैं। हिंदी वर्णमाला का मानक रूप निम्नलिखित है :

स्वर : अ आ इ ई उ ऊ ऋ ए ऐ ओ औ

अनुस्वार : अं (ं)

विसर्ग : अः (:)

व्यंजन : क ख ग घ ङ

च छ ज झ ञ

ट ठ ड ढ ण

त थ द ध न

प फ ब भ म

अंतस्थ – य र ल व

ऊष्म – श ष स ह

संयुक्त व्यंजन – क्ष त्र ज्ञ श्र

आगत वर्ण – ऑ ज फ

विशेष व्यंजन – ड़ ढ़

बोध प्रश्न 1

क) निम्नलिखित प्रश्नों के संक्षिप्त उत्तर लिखिए।

1. 'भाषा' का तात्पर्य स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

2. मौखिक भाषा एवं लिखित भाषा में अंतर स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

3. वर्ण और लिपि के अंतर्संबंध पर एक टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

4. वर्ण विचार का आशय स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

5. वर्ण विचार के अतिरिक्त व्याकरण में भाषा के अन्य अध्येतव्य विभागों का एक संक्षिप्त परिचय दीजिए।

.....

.....

.....

.....

ख) निम्नलिखित कथन सही (✓) हैं या गलत (×) उत्तर सहित स्पष्ट कीजिए :

i) अपभ्रंश से हिंदी की उत्पत्ति हुई है।

.....

.....

.....

ii) संस्कृत के 'भास' से भाषा की व्युत्पत्ति हुई है।

.....

.....

.....

iii) मौखिक भाषा स्थायी नहीं होती है।

.....

.....

.....

iv) लिखित भाषा स्थायी नहीं होती है।

.....

.....

.....

v) रचना की दृष्टि से भाषा की सबसे छोटी इकाई वर्ण है।

.....

.....

.....

vi) देवनागरी लिपि अवैज्ञानिक एवं अमानक है।

.....

.....

.....

2.4.1 स्वर वर्ण (Vowel)

आपको स्मरण होगा कि स्वर उन्हें कहते हैं जो व्यंजनों के उच्चारण में सहायक होते हैं और जिनका उच्चारण आप से हो सकता है। इसके पहले उल्लेख किया जा चुका है कि अ आ इ ई उ ऊ ऋ ए ऐ ओ औ 11 वर्ण स्वर के अंतर्गत आते हैं। देवनागरी में कुछ और वर्ण हैं जो हिंदी शब्दों में नहीं आते हैं। जैसे ऋ, ऌ, ॡ। संस्कृत और एक-आध भारतीय भाषाओं में इन वर्णों का प्रयोग कभी-कभार मिल जाता है। हिंदी में प्रयुक्त 11 स्वर वर्णों में ए, ऐ, ओ, औ पर ध्यान दें तो स्पष्ट हो जाएगा कि अ+इ =ए, आ + ई = ऐ, अ + उ = ओ एवं अ + ऊ = औ स्वर बनते हैं।

हिन्दी भाषा में ए, ऐ, ओ और औ स्वरों के दो-दो उच्चारण होते हैं, जिनमें एक साधारण और दूसरा असाधारण है। एक, ऐक्य, मोटा और कौआ शब्दों में ए, ऐ, ओ और औ का साधारण उच्चारण होता है। परंतु एक्का, ऐसा, मोहल्ला और चौसर शब्दों में उनका उच्चारण असाधारण है। ए और ओ का जहाँ असाधारण उच्चारण होता है, वहाँ इनके

बदले इ और उ भी लिखते हैं ऐ और औ स्वरों के साधारण 'अइ' और 'अउ' तथा असाधारण उच्चारण 'अय' और 'अव' होते हैं। ए और ओ को अंगरेजी में dipthong और ए और औ को tripthong कहते हैं। यह इसलिए कि पहले दो अक्षरों में दो स्वरों का और पिछले दोनों में तीन स्वरों का एक साथ उच्चारण होता है

2.4.2 व्यंजन वर्ण (Consonant)

जिन वर्णों का उच्चारण स्वरों की सहायता के बिना नहीं हो सकता है वे व्यंजन वर्ण कहलाते हैं। उच्चारण की सुविधा के लिए व्यंजनों में 'अ' लगा मान लिया जाता है। जब 'अ'कार नहीं लगा रहता है तब व्यंजनों के नीचे तिरछी रेखा लगा देते हैं जिसे 'हलन्त' कहते हैं। जैसे, क्, म्, ल्, व् आदि।

आपने वर्णमाला उपशीर्षक के अंतर्गत व्यंजन वर्णों का परिचय प्राप्त किया है। इन वर्णों में 5 वर्ण क च ट त प के नाम से जाने जाते हैं। प्रत्येक वर्ग के अंतर्गत पाँच-पाँच वर्ण होते हैं। आइए, फिर से व्यंजन वर्णों को उनके वर्गानुसार देखें:

क वर्ग – क, ख, ग, घ, ङ

च वर्ग – च, छ, ज, झ, ञ

ट वर्ग – ट, ठ, ड, ढ, ण

त वर्ग – त, थ, द, ध, न

प वर्ग – प, फ, ब, भ, म

इन पाँच वर्गों के पंचमाक्षरों – ढ, ञ, ण, न और म में नकसुर उच्चारण रहता है। ये सानुनासिक हैं।

अनुस्वार और विसर्ग भी व्यंजन के अंतर्गत हैं। इनके अतिरिक्त य, र, ल, व, श, ष, स, ह व्यंजन वर्ण में समाहित हैं। क्ष, त्र, ज्ञ और श्र संयुक्त व्यंजन कहाते हैं क्योंकि क् + ष = क्ष, त् + र = त्र, ज+ञ = ज्ञ के मेल से ये वर्ण निर्मित हुए हैं। हिंदी में ड़ और ढ़ विशेष व्यंजन के रूप में परिचित हैं। अन्य भाषाओं के प्रभाव से हिंदी में आगत वर्ण भी हैं। जैसे – डॉक्टर, बाजार आदि शब्दों में ऑ, ज आदि ध्वनियाँ।

ऊपर कहा गया है कि अनुस्वार और विसर्ग की गणना भी व्यंजनों में ही होती है। लेकिन ऐसा क्यों? यह इसलिए कि इनके उच्चारण में भी स्वर इनके पहले और दूसरे व्यंजनों के पीछे आता है। प्रायः देखा जाता है कि अनुस्वार ङ्, ञ्, ण्, न्, म् व्यंजनों का और श्, स्, ण् और र् का रूप धारण कर लेता है। इसलिए ये दोनों व्यंजन ही माने जाते हैं। जैसे – मुङ्गेर को मुंगेर, दुःसाहस को दुस्साहस भी लिखा जाता है।

अब तक व्यंजन के बारे में आपने जो सीखा उसे निम्नलिखित सार रूप में कहा जा सकता है :

- जिन वर्णों के उच्चारण में वायु रुकावट या घर्षण के साथ मुँह से बाहर निकलती है, उन्हें व्यंजन कहते हैं। व्यंजनों का उच्चारण हमेशा स्वर की सहायता से होता है।
- ककार से लेकर मकार तक पचीस व्यंजन हैं। य, र, ल और व अंतस्थ हैं। श, ष, स और ह ऊष्म हैं। अनुस्वार और विसर्ग दो वर्ण हैं। दो विशेष व्यंजन हैं – ड़ और ढ़। संयुक्त व्यंजन क्ष, त्र, ज्ञ, श्र चार हैं। लेकिन इन्हें अलग से गिनाने की आवश्यकता इसलिए नहीं है क्योंकि ये दो व्यंजनों के मेल से बने हुए होते हैं। इसी तरह आगत व्यंजन ऑ और ज या फ दो हैं। अतः हिंदी में कुल 37 वर्ण हैं।
- अगली इकाई में आपको स्वर के प्रकार – ह्रस्व, दीर्घ तथा संयुक्त से परिचित कराया जाएगा

बोध प्रश्न 2

क) निम्नलिखित प्रश्नों के संक्षिप्त उत्तर लिखिए।

1. स्वर वर्णों पर एक संक्षित टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

2. व्यंजन वर्णों का सामान्य परिचय दीजिए।

.....

.....

.....

3. अनुस्वार और विसर्ग की गणना व्यंजन के अंतर्गत क्यों होती है?

.....

.....

.....

4. अंतस्थ, ऊष्म और संयुक्त व्यंजनों का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

5. हिंदी में आगत वर्णों का सोदाहरण परिचय दीजिए।

.....

.....

.....

ख) निम्नलिखित कथन सही (✓) हैं या गलत (×) चिह्नित कीजिए:

i) हिंदी में स्वर वर्णों की संख्या 11 है। ( )

ii) हिंदी में ए और औ के दो-दो उच्चारण होते हैं। ( )

iii) क वर्ग के पंचमाक्षर में नकसुर उच्चारण नहीं होता है। ( )

iv) डॉक्टर में आगत ध्वनि नहीं है। ( )

v) 'ज्ञ' संयुक्त व्यंजन का उदाहरण है। ( )

2.5 वर्ण लिखने की रीति

नागरी या देवनागरी लिपि में हिंदी लिपि लिखी जाती है। जब स्वर और व्यंजन साथ मिलाकर लिखे जाते हैं तब उनका वह रूप नहीं रह जाता जो वर्णमाला में पाया जाता है। स्वर के प्रतिनिधि के तौर पर कुछ चिह्न रहते हैं। इन्हें मात्रा कहा जाता है। शब्द सृजन में मात्राओं की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। 'अ' की कोई मात्रा नहीं होती है। इसलिए किसी व्यंजन में 'अ' न होने का उल्लेख करना हो तो उसके नीचे हलंत (्) चिह्न का प्रयोग करना होता है। अन्य स्वरों की मात्राएँ निम्नलिखित रूप में प्रयुक्त होती हैं :

आ : का, इ : कि, ई : की, उ : कु, ऊ : कू, ए : के, ऐ : कै, ओ : को, औ : कौ

यदि व्यंजन का व्यंजन से योग होता है तो व्यंजन युक्त या संयुक्त व्यंजन कहलाता है। क्ष, त्र, ज्ञ आदि के बारे में चर्चा की जा चुकी है। ये व्यंजन संयुक्त कहलाते हैं। हिंदी में ज्ञ का उच्चारण 'ग्यँ' किया जाता है। कहीं-कहीं ग्य भी उच्चरित होता है।

कुछ शब्दों में अक्षर ऊपर नीचे लिखे जाते हैं। ये अक्षर क, ट, ठ, ड और ड़ हैं। जैसे, अक्कल, पट्टा, अड्डा, गद्दा, गड्ढा। इन्हें इस रूप में भी लिखा जाता है जैसे अक्कल, पट्टा, अड्डा, गट्ठा।

कुछ शब्दों में अक्षर आगे पीछे लिखे जाते हैं और अगले अक्षर की सीधी पाई हटाकर मिलाए जाते हैं। ये अक्षर हैं :

ख, घ, त, थ, प, ब, भ, म, य, ल, व, श, ष और स। ये अक्षर जब एक दूसरे से मिलते हैं तब पहले आनेवाले अक्षरों की खड़ी पाई हटा दी जाती है। उदाहरण – ख्याल, पत्थर, म्यान, शल्य, शिष्य, पुरस्कार आदि।

इसी तरह ङ और ञ किसी व्यंजन से मिलते हैं या अपने ही वर्ग के व्यंजन से मिलते हैं तो उसके ऊपर लिखे जाते थे। जैसे पङ्कज, अञ्जन आदि। इधर पंकज, अंजन आदि मान्य तथा मानक हैं। लेकिन त और ण दुबारा आएँ तो त्त और 'ण्ण' हो जाते हैं। जैसे, पत्ता और विशेषण।

'र' के साथ जब उ और ऊ की मात्रा लगे तो उसे 'रु' और 'रू' के रूप में लिखा जाता है। जैसे, रुपये, रूपवान आदि।

किसी अक्षर के पहले 'र' आता है तब उसका रूप निम्नलिखित रूप में लिखा जाता है। उदाहरण के रूप में धर्म, कर्म, निर्जन, निर्धन। किसी अक्षर के बाद 'र' आए तो उसे अधोलिखित रूप में लिखा जाता है। जैसे, प्रिय, चक्र, बज्र आदि।

जब क् के साथ त या र जुड़ता है तब दोनों के रूप ऐसे होते हैं – क्त, क्र। क्, ट्, ड् और ढ् के साथ य जुड़े तो उनके रूप क्य, ट्य, ड्य आदि। क् के साथ व मिलता है तो क्व हो जाता है। ष का योग ट, ठ या य से होता है तब निम्नलिखित रूप होते हैं – ष्ट, ष्ठ, ष्य। 'ह' के साथ ण, न, म, य, र, ल और व का योग होने से जो रूप बनते हैं उन्हें इस प्रकार लिखा जाता है : ह्ण, ह्न, ह्म, ह्य, ह्र, ह्ल।

बोध प्रश्न 3

क) निम्नलिखित प्रश्नों के संक्षिप्त उत्तर लिखिए।

1. स्वरों को व्यंजनों के साथ मिलाकर किस प्रकार लिखते हैं?

   .....

   .....

   .....

2. व्यंजन को व्यंजन के साथ जोड़ने की क्या रीति है?

   .....

   .....

   .....

3. त और ण द्वित्व कैसे किये जाते हैं?

   .....

   .....

   .....

ख) निम्नलिखित वर्णों का योग किस प्रकार किया जाता है?

i) क के साथ त, क के साथ र ....

ii) ह के साथ न, ह के साथ ण ....

iii) ह के साथ ल, ह के साथ व ....

iv) ऋ की मात्रा ष् के साथ ....

v) ष् के साथ र ....

vi) ड् के साथ र ....

स्वर रहित 'द' और 'ह' जब स्वर सहित 'र' के साथ संयुक्त होते हैं तब 'र' को (्र), (्र) के रूप में लिखा जाता है, जैसेः ह्रास, द्राक्षा, ह्रस्व, द्रव। स्वर रहित 'ट्' और 'ड' जब 'र' के साथ संयुक्त होते हैं तब 'र' को (्र) के रूप में लिखते हैं। जैसे – ट्रक, ड्रम, राष्ट्र, ड्रामा।

जब स्वर सहित 'श' 'र' के साथ संयुक्त होता है तब इसे 'श्र' के रूप में स्वीकृत किया जाता है न कि 'श्र' के रूप में। जैसे – श्रम, श्रमिक, श्रमण।

इसी प्रकार 'ऋ' की मात्रा (ृ) 'ष' के साथ जुड़कर 'श्रृं' का रूप लेती है। जैसे श्रृंगार, श्रृंखला।

उपर्युक्त चर्चा में आपने मात्रा-संयोजन और संयुक्ताक्षर बनाने में 'र' की विशिष्ट स्थिति के बारे में जानकारी हासिल की। ऊपर दिये गये उदाहरणों के अतिरिक्त आप अन्य शब्दों का निर्माण कर सकते हैं।

2.6 वर्ण विच्छेद

जब किसी शब्द में प्रयुक्त वर्णों को अलग-अलग किया जाता है, तो उसे वर्ण-विच्छेद कहा जाता है। शब्दों का वर्ण-विच्छेद करते समय व्यंजनों को स्वर रहित रूप में और स्वर को अलग करके लिखा जाता है। जैसेः

विजय – व् + इ + ज् + अ + य् + अ

हरदेव – ह् + अ + र् + अ + द् + ए + व् + अ

महाजन – म् + अ + ह् + आ + ज् + अ + न् + अ

उद्यम – उ + द + य् + अ + म् + अ

प्रथम – प् + र् + अ + थ् + म् + अ

कार्य – क् + आ + य् + र् + अ

रहीम – र् + अ + ह् + ई + म् + अ

धर्म – ध् + अ + र् + म् + अ

सूर्योदय – स् + ऊ + र् + य् + ओ + द् + अ + य् + अ

ऐतिहासिक – ए + त् + इ + ह् + आ + स् + इ + क् + अ

बोध प्रश्न 4

क) निम्नलिखित प्रश्न का संक्षिप्त उत्तर लिखिए।

1. वर्ण-विच्छेद का अभिप्राय स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

ख) निम्नलिखित शब्दों का वर्ण-विच्छेद कीजिए

i) कमल – .....

ii) भारतीय – .....

iii) वैज्ञानिक – .....

iv) उपर्युक्त – .....

v) स्वास्थ्य – .....

vi) धृतराष्ट्र – .....

vii) सामान्य – .....

viii) संप्रदाय – .....

ix) मनोविनोद – .....

2.7 स्वर एवं व्यंजन के उच्चारण स्थान

जिस वर्ण का जहाँ से उच्चारण होता है, वह उसका उच्चारण स्थान कहलाता है। उच्चारण स्थान के अनुसार वर्णों का विभाग निम्नलिखित है :

कंठ से	–	अ, आ, क, ख, ग, घ, ङ, ह
तालु से	–	इ, ई, च, छ, ज, झ, ञ, य, ष
मूर्धा से	–	ऋ, ट, ठ, ड, ढ़, ष
ओष्ठ से	–	उ, ऊ, प, फ, ब, भ, म
कंठ-तालु से	–	ए, ऐ
कंठ-होठों से	–	ओ, औ
दाँत-ओष्ठ से	–	फ, व
वर्त्स्य (मसूड़ा) से	–	स, ज, र, ल
अलिजिह्वा से	–	ह
नासिका से	–	अं, अँ

उपर्युक्त सूची के अनुसार वर्ण-ध्वनियों के नाम हैं – कंठ्य, तालव्य, मूर्द्धन्य, दन्त्य, ओष्ठ्य, नासिक्य, कंठ-तालव्य, कंठोष्ठ्य, दंतौष्ठ्य आदि। अब आप समझ गये होंगे कि वर्णों का उच्चारण मुख के विभिन्न अवयवों (कंठ, तालु, दाँत, जिह्वा, नासिका आदि) के द्वारा किया जाता है। ए और ऐ का उच्चारण कंठ और तालु से होने के कारण ये कंठ-तालव्य कहलाते हैं। इसी प्रकार ओ और औ का उच्चारण कंठ और ओठों से होने से ये कंठोष्ठ्य कहलाते हैं। 'क' का उच्चारण दाँतों और ओठों से होने के कारण वह दंत्योष्ठ कहलाता है। पुनः अनुस्वार और चंद्रबिंदु का उच्चारण मुख और नासिका से होने से वे अनुनासिक हैं। उच्चारण के अनुसार स्वरों के भेदों के बारे में आप अगली इकाई में पढ़ेंगे। लेकिन यहाँ इतना बताया जा सकता है कि इनका वर्गीकरण अनुनासिक और अननुनासिक है। आइए अब हम स्वर एवं व्यंजन के उच्चारण में होनेवाले प्रयत्न के बारे में कुछ जानकारियाँ प्राप्त करते हैं।

2.8 स्वर एवं व्यंजन के उच्चारण में होने वाले प्रयत्न

वर्णों के उच्चारण में होनेवाले व्यापार या यत्न को प्रयत्न कहा जाता है। प्रयत्न के दो भेद होते हैं :

आभ्यंतर प्रयत्नः वर्णों के उच्चारण से पूर्व होनेवाले प्रयत्न को आभ्यंतर प्रयत्न कहा जाता है। हर ध्वनि के लिए कोई न कोई प्रयत्न करना पड़ता है। मुँह के भीतर प्रयत्न होने के कारण ही उसे आभ्यंतर प्रयत्न कहते हैं।

बाह्य प्रयत्न : वर्णों के उच्चारण में होनेवाले प्रयत्न को बाह्य प्रयत्न कहते हैं। मुँह के बाहर जो प्रयत्न होता है उसे बाह्य प्रयत्न कहा गया है।

भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार प्रमुख रूप से प्रयत्न निम्नांकित के लिए किये जाते हैं :

1. घोष 2 अघोष 3. जपित 4. अल्प प्राण 5. महाप्राण 6. मौखिक ध्वनि 7. नासिक्य ध्वनि 8. मौखिक नासिक्य ध्वनि 9. स्पर्श 10. संघर्षी 11. पार्श्विक 12. लुंठित 13. उत्क्षिप्त 14. अर्द्धस्वर 15. मर्मर 16. संवृत्त 17. अर्द्धसंवृत्त 18. अर्द्ध विवृत 19. विवृत्त आदि। प्रयत्नों की संख्या 50 से भी अधिक हो सकती है। भारत जैसे बहुभाषी देश में किसी भी ध्वनि के लिए विभिन्न स्थानों पर एक से अधिक प्रयत्नों की आवश्यकता स्वाभाविक है।

आभ्यंतर प्रयत्न के मुख्य चार भेद होते हैं। उनका विवरण निम्नलिखित रूप में दिया जा सकता है :

विवृत : जिन वर्णों को बोलते समय जिह्वा खुली रह जाए उनका विवृत प्रयत्न है। सभी स्वर विवृत हुआ करते हैं।

स्पृष्ट : जिन वर्णों को बोलते हुए तालु आदि का जिह्वा के साथ स्पर्श हो उनका स्पृष्ट प्रयत्न होता है। क से म तक सभी वर्ण इनके अंतर्गत आते हैं।

सामान्य विवृत : जिन वर्णों का उच्चारण करते समय तालु जिह्वा कुछ खुली रह जाए उनका सामान्य विवृत प्रयत्न होता है। य, र, ल, व वर्ण इस प्रयत्न के अंतर्गत हैं।

सामान्य स्पृष्ट : जिन वर्णों का उच्चारण करते समय जिह्वा भिन्न-भिन्न स्थानों का थोड़ा स्पर्श करती है, उनका सामान्य स्पृष्ट प्रयत्न होता है। उदाहरण स्वरूप श, ष, स है।

बाह्य प्रयत्न भेद – इसके अंतर्गत तीन प्रकार हैं : (क) जिह्वा का प्रयत्न (ख) स्वरतंत्रियों का नाद और (ग) प्राण वायु का वेगः

क) जिह्वा का प्रयत्न : व्यंजनों के उच्चारण में हमारी जिह्वा तथा मुख के अन्य अवयव जो प्रयत्न स्थितियाँ बनाते हैं वे आठ प्रकार की हैं:

स्पर्शी : जिन व्यंजनों के उच्चारण में हवा फेफडों से आकर किसी अन्य अवयव का स्पर्श करती हैं और फिर अकस्मात् बाहर निकलती हैं उन्हें स्पर्शी कहते हैं जैसे, क, ख, ग, घ, ट, ठ, ड, ढ, त, थ, द, ध, प, फ, ब और भ।

संघर्षी : जिन व्यंजनों के उच्चारण में वायु घर्षणपूर्वक निकलती है उन्हें संघर्षी कहा जाता है। उदाहरण : श, ष, स, ट, ख, ज, झ आदि।

स्पर्श-संघर्षी : उनके उच्चारण में स्पर्श का समय अपेक्षाकृत अधिक होता है और उच्चारण के बाद वाला भाग संघर्षी हो जाता है उन्हें स्पर्श-संघर्षी कहते हैं। जैसे, च, छ, द, झ।

नासिक्य : जिन व्यंजनों के उच्चारण के समय वायु मुँह के साथ-साथ नासिका से भी निकलती है उन्हें नासिक्य कहते हैं। उदाहरण स्वरूप, ङ, ञ, ण तथा म।

पार्श्विक : यदि उच्चारण में जीभ तालु स्पर्श करती है लेकिन दोनों या एक तरफ का रास्ता खुला रहता है जिससे वायु निकलती रहती है तो वहाँ पार्श्विक प्रयत्न होता है। एकमात्र व्यंजन ल इसका उदाहरण है।

प्रकंपित : जब प्राणवायु जिह्वा को दो तीन बार प्रकंपित करके निकले तो उसे प्रकंपित प्रयत्न के अंतर्गत रखा जाता है। जैसे, र।

उत्क्षिप्त : यदि उच्चारण करते समय जीभ पीछे जाकर झटके से वापिस आए तो उत्क्षिप्त व्यंजन कहलाता है। उदाहरण : ट, ठ, ड, ढ आदि।

संघर्षहीन : जिन व्यंजनों के उच्चारण में जिह्वा तथा अन्य अवयवों को विशेष प्रयत्न करना नहीं पड़ता है वे संघर्षहीन प्रयत्न कहलाते हैं। जैसे, य, व आदि।

ख) **स्वर-तंत्रियों का नाद** : स्वर-तंत्रियों के नाद के आधार पर व्यंजन घोष और अघोष दो भेदों में विभाजित होते हैं:

घोष : जिन व्यंजन वर्णों के उच्चारण में श्वास से स्वरतंत्रियाँ कंपित होती हैं उन्हें घोष कहा जाता है। जैसे, ग, घ, ङ, ज, झ, ञ, ड, ढ, ण, द, ध, न, ब, भ, म।

अघोष : जिन व्यंजन वर्णों के उच्चारण में स्वरतंत्रियाँ झंकृत नहीं होती हैं वे अघोष कहलाते हैं। उदाहरण क, ख, च, छ, ट, ठ, त, थ, प, फ, श, ष, स

ग) **प्राणवायु का वेग**

बाह्य प्रयत्न के अनुसार श्वास के आधार पर व्यंजनों के दो भेद होते हैं – अल्प प्राण और महाप्राण किए गए हैं:

अल्पप्राण : जिन व्यंजनों के उच्चारण में प्राण वायु कम मात्रा में बाहर आए उन्हें अल्पप्राण कहते हैं। प्रत्येक वर्ग का पहला, तीसरा और पाँचवाँ अक्षर एवं य, र, ल, व अनुस्वार तथा सभी स्वर वर्ण अल्प प्राण हैं।

महाप्राण : जिन व्यंजनों के उच्चारण में श्वास वायु अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में बाहर आती हैं, उन्हें महाप्राण कहते हैं। प्रत्येक वर्ग के दूसरे, चौथे वर्ण और ह महाप्राण कहलाते हैं।

बोध प्रश्न 5

क) निबंधात्मक प्रश्नों के उत्तर लिखिए:

1. वर्णों के उच्चारण स्थान का आशय स्पष्ट करते हुए कंठ्य, तालव्य और मूर्द्धन्य वर्ण-ध्वनियों का परिचय दीजिए।

.....

.....

.....

2. कंठ तालव्य, कंठोष्ठ्य और दंतोष्ठ्य वर्ण ध्वनियों के अंतर्गत वर्णों का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

3. आभ्यंतर प्रयत्न के प्रमुख भेदों का सोदाहरण परिचय दीजिए।

.....

.....

.....

.....

4. बाह्य प्रयत्न भेद की उदाहरण सहित चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

5. अल्पप्राण और महाप्राण व्यंजनों में निहित अंतर स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

ख) निम्नलिखित कथनों पर सही (✓) अथवा गलत (×) चिह्न लगाइए :

i) य और व विवृत प्रयत्न के उदाहरण हैं। ( )

ii) च और ज संघर्षी व्यंजन हैं। ( )

iii) वर्गों के दूसरे और चौथे वर्ण महाप्राण कहलाते हैं। ( )

iv) जिन व्यंजनों के उच्चारण में स्वरतंत्रियाँ कंपित हों उन्हें अघोष कहते हैं। ( )

v) विवृत स्वरों के उच्चारण में मुँह सबसे कम खुलता है। ( )

vi) अनुस्वार एक स्वर है। ( )

vii) सघोष ध्वनियों के उच्चारण में स्वरतंत्रियाँ झंकृत होती हैं। ( )

viii) स्पृष्ट प्रयत्न में तालु जिह्वा कुछ खुली रह जाती है। ( )

2.9 सारांश

प्रस्तुत इकाई का उद्देश्य था आपको हिंदी की वर्ण-व्यवस्था से परिचित कराना। इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए आपको संक्षेप में वर्ण और लिपि, वर्णमाला, स्वरों तथा व्यंजनों का परिचय दिया गया। वर्ण लिखने की रीति, वर्ण-विच्छेद आदि के माध्यम से आपको स्वर एवं व्यंजन वर्णों के लेखन में आनेवाली शंकाओं और समस्याओं के बारे में अवगत कराया गया। यह भी स्पष्ट कराया गया है कि स्वर एवं व्यंजन के उच्चारण स्थान कौन-से हैं। वर्णों के उच्चारण में आभ्यंतर और बाह्य प्रयत्नों के अंतर्गत विभिन्न भेदोपभेदों को सोदाहरण प्रस्तुत कर आपको भाषा वैज्ञानिक शब्दावलियों में अवगत कराने का प्रयास भी किया गया। इस इकाई के पाठ से आपको वर्णों अथवा ध्वनियों का सही उच्चारण, लेखन-विधि एवं शुद्ध रूप जानने तथा समझने में बड़ी सहायता मिलेगी।

2.10 बोध प्रश्नों /अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

ख) (i) (✓)

(ii) (×)

(iii) (✓)

(iv) (×)

(v) (✓)

(vi) (×)

बोध प्रश्न 2

ख) (i) (✓)

(ii) (✓)

(iii) (×)

(iv) (×)

(v) (✓)

बोध प्रश्न 3

ख) (i) क्त, क्र

(ii) ह्न, ह्ण

(iii) ह्ल, ह्व

(iv) श्रृ

(v) श्र

(vi) ड्र

बोध प्रश्न 4

ख) i) कमल – क् + अ + म् + अ + ल् + अ

ii) भारतीय – भ् + आ +र् + अ + त् + ई + य् +अ

iii) वैज्ञानिक – व् + ऐ + ज् + ञ् + आ + न् + इ + क् + अ

iv) उपर्युक्त – उ + प् + अ + र् + य् + उ + क् + त् + अ

v) स्वास्थ्य – स् + व् + आ + स् + थ् + य् + अ

vi) धृतराष्ट्र – ध् + ऋ + त् + अ + र् + आ + श् + ट् + र् + अ

vii) सामान्य – स् + आ + म् + आ + न् + य् + अ

viii) संप्रदाय – स् + म् + अ + प् + र् + अ + द् + आ + य + अ

ix) मनोविनोद – म् + अ + न् + ओ + व् + इ + न् + ओ + द्+ अ

बोध प्रश्न 5

ख) (i) (✓)

(ii) (×)

(iii) (✓)

(iv) (×)

(v) (×)

(vi) (✓)

(vii) (✓)

(viii) (×)

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 3 स्वर के प्रकार

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 स्वर : परिभाषा एवं स्वरूप

3.3 स्वरों के वर्गीकरण के आधार

3.3.1 उच्चारण : स्थान और प्रयत्न

3.4 स्वर के प्रकार

3.4.1 ह्रस्व स्वर

3.4.2 दीर्घ स्वर

3.4.3 संयुक्त स्वर

3.5 मूल स्वर

3.5.1 द्वि स्वर

3.5.2 अ की स्थिति

3.5.3 अनुनासिकता

3.5.4 आघात

3.5.5 शब्दों में अ–लोप की स्थिति

3.6 मानक स्वर : अवधारणा और स्वरूप

3.7 सारांश

3.8 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

3.0 उद्देश्य

इस इकाई में स्वर के प्रकार पर चर्चा होगी। इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- स्वर के स्वरूप का वर्णन कर सकेंगे;
- स्वरों के वर्गीकरण के आधार का परिचय दे सकेंगे;
- स्वर के प्रकारों के बारे में एक अच्छी समझ विकसित कर सकेंगे;
- मानक स्वर की अवधारणा और स्वरूप के बारे में जानकारी हासिल कर सकेंगे;
- मूल स्वरों के उच्चारण, स्थान और प्रयत्न पर प्रकाश डाल सकेंगे; और
- स्वर के सम्बन्ध में अपने ज्ञान को समृद्ध कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपने हिंदी की वर्ण व्यवस्था के बारे में विस्तारपूर्वक अध्ययन किया। आपने स्वर एवं व्यंजन वर्णों के उच्चारण, लेखन आदि के संबंध में भी विशद् रूप से जानकारी हासिल की थी। इस इकाई में स्वर के प्रकार पर चर्चा की जाएगी। ह्रस्व, दीर्घ तथा संयुक्त स्वरों के अंतर्गत स्वर के संबंध में आपकी जानकारी को अधिक विस्तार देने का प्रयास इस इकाई में किया जायेगा। व्याकरण की दृष्टि से ध्वनियों का अत्यंत प्रचलित और प्राचीन वर्गीकरण 'स्वर' और 'व्यंजन' है। स्वर और व्यंजन का उल्लेख

उपनिशद् काल से मिलता है। लेकिन ईसापूर्व दूसरी शताब्दी के आसपास महाभाष्यकार पतंजलि ने एक सूत्र प्रदान किया – 'स्वयं राजन्ते स्वरा अन्वग् भवति व्यंजनमिति'। इसका आशय है स्वर स्वतंत्र हैं लेकिन व्यंजन उन पर (स्वरों पर) आधारित तथा अवलंबित होते हैं। पिछली इकाई में आपने पढ़ा भी है कि व्यंजनों का उच्चारण सदैव स्वर की सहायता से होता है। जैसे – म् + अ = म, र् + अ = र, ल् + अ = ल आदि बहरहाल, आइए अब हम स्वर की परिभाषा और उसके स्वरूप के बारे में अवगत होने का प्रयास करते हैं।

3.2 स्वर : परिभाषा एवं स्वरूप

आप जान चुके हैं कि स्वर एवं व्यंजन अत्यंत प्राचीन काल से प्रचलित हैं। लेकिन, इनके बारे में पतंजलि ने सबसे पहले उल्लेख किया था। भारतीय तथा पाश्चात्य परंपरा में स्वर की जो परिभाषाएँ दी गई हैं उनका सार रूप कुछ ऐसा उभरता है – "स्वर उन ध्वनियों को कहते हैं जो स्वयं उच्चरित होती हैं। इसके विपरीत व्यंजन उन ध्वनियों को कहते हैं जो स्वर की सहायता से उच्चरित होती हैं।" उपर्युक्त परिभाषा हिंदी सहित अन्य भारतीय भाषाओं के स्वरों के लिए बहुत ही मान्य है। पाश्चात्य देशों की अनेक भाषाओं के लिए भी सटीक हो सकती है। लेकिन कई भाषाओ में जहाँ स्वर ध्वनियाँ होती ही नहीं हैं वहाँ उपर्युक्त परिभाषा स्वीकृत नहीं हो सकती है। उल्लेख करने वाली बात है कि रूमानिया, चौक आदि कुछ ही भाषाओं में ही स्वर का प्रयोग या तो कम है अथवा नहीं के बराबर है। अस्तु, जिन वर्णों के उच्चारण में हवा मुँह से बिना किसी रुकावट के निकलती है, उन्हें स्वर कहते हैं। सभी स्वरों का उच्चारण देर तक किया जा सकता है। ई और ऊ को छोड़कर अधिकांश स्वरों के उच्चारण में मुख विवर में हवा प्रकंपित होती हुई बिना विशेष अवरोध के निकल जाती है। स्वरों का उच्चारण किसी एक निश्चित स्थान से होता नहीं। पूरे मुख-विवर से एक प्रकार की गूँज होती है। यह गूँज मुख-विवर के स्वरूप पर निर्भर करती है। मुख विवर प्रशस्त होगा तो एक प्रकार की गूँज होगी जबकि मुखविवर सँकरा हो तो दूसरे प्रकार की गूँज का उत्पन्न होना स्वाभाविक है।

3.3 स्वरों के वर्गीकरण के आधार

स्वरों का वर्गीकरण निम्नलिखित आधारों पर किया जा सकता है :

जीभ की स्थिति : किसी भी स्वर के उच्चारण में जीभ का व्यवहृत भाग महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अग्र, मध्य और पश्च भाग के आधार पर अथवा कभी तालु के अति निकट तो कभी बिलकुल नीचे अथवा कभी तालु के आसपास की स्थिति के अनुसार स्वरों का वर्गीकरण होता है।

ओष्ठों की स्थिति : ओष्ठों को वृत्ताकार करके स्वरों का उच्चारण हो तो उन्हें वृत्तमुखी स्वर कहा जाता है। हिंदी में उ, ऊ, ओ, औ इस प्रकार के स्वर हैं। यदि ओष्ठों को बिना वृत्ताकार किए स्वरों का उच्चारण हो तो उन्हें आवृत्तमुखी स्वर के नाम से जाना जाता है। जैसे, अ, आ, इ, ई, ए, ऐ।

मात्रा : मात्रा से आशय स्वर के उच्चारण में लगने वाले समय की मात्रा है। इसके आधार पर ह्रस्व और दीर्घ स्वर दो भेद होते हैं। जैसे, अ, इ, उ ह्रस्व हैं तो आ, ई, ऊ दीर्घ स्वर हैं।

कौवे की स्थिति : कौवे की स्थिति के अनुसार स्वरों के मौलिक और आनुनासिक दो भेद होते हैं। अ, आ, इ, ई आदि स्वरों के उच्चारण के समय कौवा ऊपर उठ कर पूरी हवा मुँह से निकालने में सहायक होता है। इसलिए इन्हें मौलिक स्वर कहा जाता है। लेकिन अँ, आँ, इँ, उँ आदि के उच्चारण में कौवा बीच में लटकता रहता है

तो हवा का थोड़ा अंश नाक से होकर निकलने के चलते इन्हें आनुनासिक स्वर के अंतर्गत रखा जाता है।

ओष्ठ, जिह्वा, मात्रा और कौवे की स्थिति के अलावा मुँह की मांसपेशियों की दृढ़ता या शिथिलता, स्वर तंत्रियों की अवस्थिति आदि के आधार पर भी हिंदी के स्वरों का वर्गीकरण किया जा सकता है। लेकिन, इन पर विचार किए बिना अब हिंदी के स्वरों के उच्चारण-स्थान एवं प्रयत्न के बारे में चर्चा करना समीचीन प्रतीत होता है।

3.3.1 उच्चारण–स्थान और प्रयत्न

हिंदी के मूलस्वरों और उनके रूपों के उच्चारण – स्थान एवं प्रयत्न की चर्चा निम्नलिखित रूप में की जा सकती है :

अ : यह अर्द्ध-विवृत मध्य स्वर है। इसके उच्चारण में जीभ का मध्य भाग कुछ ऊपर उठता है और होंठ कुछ खुल जाते हैं। 'अ' स्वर का व्यवहार बहुत से शब्दों में पाया जाता है जैसे – अनाज, अब, कमल, सरल। इन शब्दों से आप स्पष्ट बता सकते हैं कि अ का उच्चारण शब्दों के आरंभ में या मध्य में हुआ है।

आ : यह विवृत पश्च स्वर है। प्रधान स्वर अ से बहुत मिलता-जुलता है। इसके उच्चारण में जिह्वा नीचे की ओर तथा होंठ चारों ओर फैल जाते हैं। यह स्वर आदि, मध्य तथा अंत तीनों ही स्थितियों में उच्चरित होता है – आकाश, काली, महीना।

ऑ : यह अर्द्ध विवृत दीर्घ पश्च स्वर है। यह अंग्रेजी से आगत वर्ण है। आदि एवं मध्य की स्थिति में यह उच्चरित होता है। उदाहरणार्थ, डॉक्टर, ऑफिस, कॉटन।

इ : इसके उच्चारण में जिह्वा का अगला भाग काफी उठ जाता है और होंठ कुछ खुले होते हैं। आदि, मध्य एवं अंत तीनों स्थितियों में यह स्वर उच्चरित होता है। जैसे, इसका, वैज्ञानिक, रवि आदि।

ई : यह संवृत दीर्घ अग्र स्वर है। इसके उच्चारण में जिह्वा का पिछला भाग बहुत अधिक ऊपर उठता है और होंठ चौड़ाई में खुल जाते हैं। यह भी आदि, मध्य और अंत में उच्चरित होता है। ईख, सीता, बड़ी जैसे शब्दों में तीनों स्थितियों में उच्चरित होने का उल्लेख मिल जाता है।

उ : यह संवृत ह्रस्व पश्च स्वर है। इसके उच्चारण में जिह्वा का पिछला भाग बहुत अधिक ऊपर उठता है तथा ओंठ वृत्ताकार हो जाते हैं। आदि, मध्य तथा अंत तीनों ही स्थितियों में इसका उच्चारण होता है। उदाहरणार्थ, कुमति, सुमति, मृदुल, पृथुल, गुरु, साधु आदि।

ऊ : यह संवृत दीर्घ स्वर है। इसके उच्चारण में जिह्वा का पिछला भाग बहुत अधिक ऊपर उठकर कोमल तालु के पास पहुँच जाता है। तीनों ही स्थितियों में इसका उच्चारण होता है। जैसे, ऊसर, ऊनी, चूहा, सत्तू, भालू।

ए : यह अर्द्ध संवृत अग्र स्वर है। इसके उच्चारण में होंठ दोनों ओर ई से अधिक खुलते हैं। बोलियों में इसका अधिक प्रयोग होता है। तीनों स्थितियों में उच्चारण होता है : एक, केला, चेला, चले, बोले आदि।

ऐ : यह अर्द्धविवृत ह्रस्व अग्रस्वर है। वैर, पैर, सैर, कसैला, विषैला आदि शब्दों में इसकी उपस्थिति देखी जा सकती है।

ओ : यह अर्द्धसंवृत पश्च स्वर है। इसके उच्चारण में होंठ काफी वृत्ताकार हो जाते हैं। यह तीनों स्थितियों में उच्चरित होता है – गोला, घोला, ओला, पीओ, जीओ आदि।

औ : यह अर्द्धविवृत वृत्तमुखी ह्रस्व पश्च स्वर है। इसके उच्चारण में जीभ का पिछला भाग कुछ ऊपर उठ जाता है। लिखने में और का ही प्रयोग होता है। औसर, औरत आदि।

बोध प्रश्न 1

क) निम्नलिखित प्रश्नों के संक्षिप्त उत्तर लिखिए।

1. स्वर की परिभाषा देते हुए उसके स्वरूप पर प्रकाश डालिए।

   .....

   .....

   .....

2. स्वरों के वर्गीकरण के विभिन्न आधारों का उल्लेख कीजिए।

   .....

   .....

   .....

3. अ, आ, ऑ, इ, ई के उच्चारण-स्थान और प्रयत्न का उल्लेख कीजिए।

   .....

   .....

   .....

4. ए, ऐ, ओ, औ के उच्चारण-स्थान और प्रयत्न के बारे में लिखिए।

   .....

   .....

   .....

5. स्वर और व्यंजन में दो अंतर स्पष्ट कीजिए।

   .....

   .....

   .....

ख) निम्नलिखित कथन सही (✓) हैं या गलत (×) उल्लेख कीजिए।

i) औ अर्द्धविवृत और वृत्तमुखी ह्रस्व पश्च स्वर है ( )

ii) ओ अर्द्धविवृत ह्रस्व पश्च स्वर है। ( )

iii) ऐ अर्द्धविवृत ह्रस्व अग्रस्वर है ( )

iv) ओ के उच्चारण में जिह्वा काफी वृत्ताकार हो जाती है। ( )

v) और के उच्चारण में जीभ का पिछला भाग कुछ ऊपर उठ जाता है। ( )

vi) ऊ संवृत ह्रस्व स्वर है। ( )

vii) ए अर्द्ध संवृत अग्रस्वर है। ( )

viii) ए के उच्चारण में दोनों होंठ नहीं खुलते। ( )

ix) ऑ अर्द्धविवृत दीर्घ पश्च स्वर है। ( )

x) आ संवृत पश्च स्वर है। ( )

3.4 स्वर के प्रकार

आप जानते हैं कि हिंदी में कुल ग्यारह स्वर हैं। उच्चारण में लगने वाले समय के आधार पर स्वरों के तीन प्रकार हैं:

1. ह्रस्व स्वर
2. दीर्घ स्वर
3. संयुक्त स्वर

अब हम उपर्युक्त तीनों प्रकार के स्वरों पर पृथक् रूप से आपको बताना चाहेंगे। आइए हम सबसे पहले ह्रस्व स्वर के बारे में परिचय प्राप्त करें।

3.4.1 ह्रस्व स्वर

आपको स्मरण होगा कि स्वरों के वर्गीकरण के विभिन्न आधारों की चर्चा के दौरान मात्रा को भी एक प्रमुख आधार के रूप में उल्लेख किया गया था। यहाँ मात्राओं का अर्थ स्वर के उच्चारण में लगने वाले समय की मात्रा है। अतः हम कह सकते हैं कि जिन स्वरों के उच्चारण में सबसे कम अर्थात् एक मात्रा का समय लगता है उन्हें ह्रस्व स्वर कहते हैं। इस दृष्टि से अ, इ, उ और ऋ ह्रस्व स्वर माने जाते हैं। ह्रस्व स्वर का दूसरा नाम मूल स्वर है। अंग्रेजी में ह्रस्व स्वर को 'शार्ट वायल' के नाम से जाना जाता है।

यहाँ इस बात का उल्लेख करना अनुचित न होगा कि आधुनिक ध्वनि विज्ञान के अनुसार स्वर वे सघोष ध्वनियाँ हैं, जिनके उच्चारण में मुख विवर थोड़ा-बहुत सदैव विवृत रहता है और श्वास-नलिका से आती हुई वायु बिना किसी अवरोध के धारा प्रवाह निकल जाती है। स्वर अपेक्षाकृत अधिक मुखर होते हैं। इन विशेषताओं के आधार पर यदि ह्रस्व स्वर के अंतर्गत चारों स्वरों – अ, इ, उ, ऋ की परख हो तो, ये स्वर सिद्ध होते हैं। कहना न होगा कि अन्य स्वरों की भाँति ये भी अक्षर का निर्माण करने में समर्थ हैं।

3.4.2 दीर्घ स्वर

जिन स्वरों के उच्चारण में ह्रस्व स्वरों से अधिक समय लगता है, उन्हें दीर्घ स्वर कहा जाता है। दीर्घ स्वरों को अंग्रेजी में 'लांग वावेल' कहा जाता है। दीर्घ स्वरों की संख्या सात हैं – आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ।

दीर्घ स्वरों को संधि स्वर भी कह सकते हैं, क्योंकि वे दो स्वरों के योग से बनते हैं। ये दो तरह के हैं, एक तो वे जो उसी स्वर के दीर्घ उच्चारण के कारण बनते हैं। जैसे, आ, ई, ऊ को क्रमशः अअ, इइ और उउ हैं और दूसरे वे जो दो भिन्न-भिन्न स्वरों के मिलने से बनते हैं। जैसे, अइ = ए, आए = ऐ, अ उ = ओ, अओ = औ।

उपर्युक्त तथ्यों को अधिक पुष्ट करने के लिए कुछ शब्द उदाहरण के लिए प्रस्तुत किए जा सकते हैं :

अ + अ = आ

मत + अनुसार = मतानुसार

गीत + अंजलि = गीतांजलि

योग + अभ्यास = योगाभ्यास

मूल्य + अंकन = मूल्यांकन

इ + इ = ई

रवि + इंद्र = रवींद्र

मुनि + इंद्र = मुनींद्र

अभि + इष्ट = अभीष्ट

उ + उ = ऊ

सु + उक्ति = सूक्ति

भानु + उदय = भानूदय

गुरु + उपदेश = गुरुपदेश

अ + इ = ए

नर + इंद्र = नरेंद्र

शुभ + इच्छा = शुभेच्छा

भारत + इंदु = भारतेंदु

परम + ईश्वर = परमेश्वर

अ + उ = ओ

पर + उपकार = परोपकार

लोक + उक्ति = लोकोक्ति

सूर्य + उदय = सूर्योदय

विवाह + उत्सव = विवाहोत्सव

अ + ओ = औ

जल + ओघ = जलौघ

दंत + ओष्ठ = दंतौष्ठ

परम + ओज = परमौज

अ + ओ = औ

महा + औषध = महौषध

महा + औदार्य = महौदार्य

ए और ओ में दो स्वरों का योग मिलता है। इसलिए इन्हें अंगरेजी में 'डिपथांग' कहा जाता है जबकि ऐ और औ में तीन स्वरों का एक साथ उच्चारण होने के चलते 'ट्रिपथांग' कहा जाता है।

एक बात और है, सभी स्वरों का अनुनासिक उच्चारण भी होता है। जैसे, अँ, आँ, इँ, ईं, उँ, ऊँ, एँ, ऐं, ओं, औं। आपने यहाँ देखा कि जिन स्वरों के ऊपर मात्राएं होती हैं। वहाँ अनुनासिक या चंद्रबिंदु के स्थान पर अनुस्वार या बिंदु लगाया जाता है।

इस संदर्भ में यह भी उल्लेख करना जरूरी है कि जिन स्वरों में दो मात्राओं से भी अधिक समय लगता है, उन्हें प्लुत स्वर कहते हैं। जैसे, 'ओडम'। यहाँ ओ प्लुत है क्योंकि इसे बोलने में दो मात्राओं से अधिक समय लगता है।

3.4.3 संयुक्त स्वर

वैदिक काल में संयुक्त स्वरों की संख्या चार थी। ये स्वर थे – ए (अइ), ऐ (आई), ओ (अउ), औ (आउ)। लौकिक संस्कृत तक आते-आते संयुक्त स्वरों की संख्या दो रह गई। ए और ओ मूल स्वर बन गए। पालि, प्राकृत, अपभ्रंश जैसी मध्यकालीन भाषाओं में इन दोनों संयुक्त स्वरों का लोप हो गया। लेकिन, आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में ऐ और औ पुनरू अस्तित्व में आ गए। हिंदी तथा उसकी प्रायः सभी बोलियों में इन दोनों स्वरों का प्रयोग संयुक्त स्वर और मूल स्वर दोनों रूपों में होता आ रहा है। इसे अधिक स्पष्ट करने के लिए निम्नलिखित उदाहरण देखे जा सकते हैं :

ऐ (संयुक्त स्वर) – भैया, मैया, रुपैया – यहाँ ऐ के बाद य श्रुति है।

औ (संयुक्त स्वर) – पौवा, कौवा, हौवा – यहाँ औ के बाद व श्रुति है।

ऐ (मूल स्वर) – कैसा, पैसा, बैल आदि शब्दों में ऐ के बाद य श्रुति नहीं है। ऐ का उच्चारण मूल स्वर के रूप में ही होता है।

3.5 मूल स्वर

जो स्वर न अग्र रेखा के समीप हैं, न पश्च रेखा के, केन्द्रीय स्वर कहलाते हैं – अ, आ ऐसे ही स्वर हैं।

नागरी लिपि में मात्रा पद्धति है। ये मात्राएं स्वरों के चिह्न होती हैं। जब कभी कोई व्यंजन किसी स्वर के साथ आता है तब उसके साथ पूरा स्वर नहीं लिखा जाता, केवल स्वर की मात्रा लिखी जाती है। मात्रा स्वर समरूप (ग्रेफीम) कही जाती है।

हिंदी स्वर ध्वनियों में प्रथम छह स्वर और उनकी मात्राएँ इस प्रकार हैं –

स्वर	विवरण	मात्रा
अ	ह्रस्व अ, जैसे अनार	–
आ	दीर्घ आ, जैसे काम	ा
इ	ह्रस्व इ, जैसे जिन	ि
ई	दीर्घ ई, जैसे जीत	ी
ड	ह्रस्व उ, जैसे कुल	ु
ऊ	दीर्घ ऊ, जैसे कूल	ू

3.5.1 द्वि स्वर

नीचे दिए गए चार स्वर द्वि स्वर कहलाते हैं:

स्वर	विवरण	मात्रा
ए	(अ+इ) जैसे मेल	े
ऐ	(अ+ए) जैसे कैसा	ै
ओ	(अ+उ) जैसे गोल	ो
औ	(अ+ओ) जैसे कौन	ौ

संधि में चारों द्विस्वरों का प्रयोग सहज ही देखा जा सकता है।

3.5.2 अ की स्थिति

स्वर अ की कोई मात्रा नहीं होती। यह हर व्यंजन में अनुस्यूत होता है। जैसे :

प =प् + अ

(शुद्ध व्यंजन) + (स्वर भाग)

बोध प्रश्न 2

नीचे दिए गए कुछ कथन सही हैं, कुछ गलत। सही कथन के आगे (?) तथा गलत कथन के आगे (x) चिह्न लगाइए:

1. सभी प्रकार की ध्वनियाँ स्वर और व्यंजन ध्वनियाँ हैं।
2. स्वर ध्वनियाँ वे हैं जो स्वतः बोली जा सकती हैं।
3. जिनका उच्चारण बिना स्वर के नहीं होता वे व्यंजन ध्वनियाँ हैं।
4. जिह्वा के क्रमशः तीन भाग हैं, मध्य पश्च और अग्र।
5. मात्रा स्वर की समरूप कही जाती है।
6. अ–आ केन्द्रीय स्वर हैं।
7. औ में ''अ+औ'' का योग है।
8. स्वर ''अ'' की कोई मात्रा नहीं होती।

3.5.3 अनुनासिकता

स्वरों के उच्चारण में अनुनासिकता की स्थिति मानी जाती है। इनके उच्चारण में अलिजिह्वा (कौवा) मध्य में लटकती रहती है, जिससे वायु का कुछ अंश नाक से भी निकलता है;

जैसे आं अं इँ उँ ऊँ एँ ऐं आदि ऐसी ही स्वर ध्वनियाँ हैं। इसके दो भेद हैं –

1. अल्प अनुनासिक – जैसे राम का ''आ (ा)'' में
2. पूर्ण अनुनासिक – जैसे हाँ का ''आँ'' में

3.5.4 आघात

जब कि स्वर का उच्चारण बल या जोर देकर किया जाता है तब इसे आघात (Accent) कहते हैं। भाषा विज्ञानी इसे स्वराघात और बलाघात कहते हैं। इसकी तीन स्थितियाँ मानी गई हैं –

1. बलात्मक स्वराघात – इसमें किसी ध्वनि पर बल देकर उच्चारण किया जाता है। जैसे ''इन्द्र शत्रु'' में यदि ''इन्द्र'' पर स्वराघात किया जाएगा तो यह बहुब्रीहि समास हो जाएगा।

2. संगीतात्मक स्वराघात – वाक्य और खासकर कविता में ध्वनिगत उतार चढ़ाव होता है। इसे संगीतात्मक स्वराघात कहा जाता है। उदाहरण – 'क्या तुम घर जाओगे' में ''जाओगे'' का उच्चारण कुछ ऊँचे सुर में होता है।

3. रूपात्मक स्वराघात – प्रायः हर व्यक्ति का कंठ स्वर भिन्न होता है। इसी से व्यक्ति की पहचान हो जाया करती है। इसका संबंध भाषा से न होकर बोलने या उच्चारण से होता है। अतः भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से इसका विशेष महत्व नहीं है। इसका महत्व यही है कि अंधकार में भी किसी की आवाज़ सुनकर हम पहचान लेते हैं कि यह किसी परिचित की ध्वनि है या अपरिचित की। इसी प्रकार टेलीफोन पर आवाज सुनकर अनुमान कर सकते हैं कि यह किसकी आवाज है।

3.5.5 शब्दों में अ–लोप की स्थिति

आपने देखा कि अ स्वर की मात्रा नहीं होती इसी प्रकार हिंदी में कुछ स्थानों पर अ स्वर का उच्चारण नहीं होता।

उदाहरण के लिए ''लड़की'' शब्द पर ध्यान दीजिए। कोई अन्य भाषा-भाषी इसका उच्चारण ''ल + अ ड् + अ क् + ई'' इन समस्त ध्वनियों के साथ करेगा। किंतु हिंदी मातृभाषा भाषी इस शब्द का उच्चारण ''लड़की'' न कर ''लड़की'' के रूप में करेगा। अर्थात् ''ड़'' व्यंजन के बाद आने वाले ''अ'' स्वर का उच्चारण नहीं होगा। हिंदी में ऐसे अनेक शब्द मिलते हैं जिनके मध्य में आने वाले अ-स्वर का उच्चारण करते समय लोप कर देते हैं।

इसी प्रकार राम, चुप, कुल आदि शब्दों का उच्चारण कीजिए। क्या हम इन शब्दों का उच्चारण ठीक वैसा ही करते हैं जिस रूप में ये लिखे हुए हैं? नहीं, हिंदी भाषा-भाषी इन शब्दों का उच्चारण ''राम्, ''चुप'', ''कुल'' आदि के रूप में करता है। अर्थात् हिंदी में शब्द के अंत में आने वाले अ-स्वर का उच्चारण नहीं भी किया जाता है।

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या हिंदी में अ-स्वर का लोप कर देने के संबंध में कोई नियम है या हम अपनी मर्जी से उच्चारण करते समय अ का लोप कर देते हैं?

हिंदी में अ-स्वर का लोप एक तो शब्द के अंत में तथा दूसरे शब्द के मध्य में दो स्थानों पर किया जाता है। आगे दोनों स्थितियों की चर्चा की गई है।

1. शब्दांत में ''अ'' लोप

जैसा कि बताया गया कि हिंदी में शब्द के अंत में सदैव अ-स्वर का लोप कर दिया जाता है। इसका अर्थ यह हुआ कि हिंदी भाषी शब्द के अंत में अ-रहित व्यंजन का उच्चारण करते हैं तथापि लिखते समय उन शब्दों में हलंत का चिह्न नहीं लगाते क्योंकि हमारी लेखन व्यवस्था तो परंपरागत रूप का ही अनुसरण करती है।

अब नीचे दिए गए शब्दों के लिखित तथा उच्चरित रूपों पर ध्यान दीजिए। उच्चारित रूपों में शब्द के अंत में अ-लोप दिखाया गया है –

लिखित रूप	उच्चरित रूप
आम	आम्
कल	कल्
चार	चार्
पाँच	पाँच्
पेड़	पेड़्

2. शब्द के मध्य में अ लोप

हिंदी में शब्दों के मध्य में भी उच्चारण के स्तर पर अ-स्वर का लोप किया जाता है। शब्द के मध्य में होने वाले अ-लोप के दो अलग नियम मिलते हैं –

नियम 1

आप देख चुके हैं कि ''लड़की'' शब्द में उच्चारण करते समय ''ड़'' के बाद आने वाले स्वर का लोप किया जाता है। इसी तरह अन्य शब्दों में अ-लोप देखा जा सकता है –

लिखित रूप	उच्चरित रूप
लड़का	लड्का
जनता	जन्ता
मछली	मछ्ली
गिनती	गिन्ती
सरसों	सर्सों
निकला	निक्ला
फ़रसा	फ़र्सा

यदि आप इन शब्दों की संरचना पर ध्यान दें तो पाएँगे कि जिस ''अ'' स्वर का लोप हो रहा है उसके पूर्व तथा उसके बाद में आने वाले वर्णों की प्रकृति समान है अर्थात् सभी शब्दों में लुप्त होने वाले अ के पूर्व एक व्यंजन तथा एक स्वर अवश्य आ रहा है और उसके बाद में एक व्यंजन तथा दीर्घ स्वर आ रहा है। जब भी इस प्रकार की स्थिति होगी उच्चारण में अ-स्वर का लोप कर दिया जाता है।

नियम 2

अब नीचे दिए गए शब्दों के लिखित तथा उच्चरित रूपों पर ध्यान दीजिए –

लिखित रूप	उच्चरित रूप
अनबन	अन्बन्
अनशन	अन्शन्
तड़पन	तड्पन्
सिमटन	सिम्टन्

उपरोक्त उदाहरणों में अंतिम अ-लोप के साथ एक अ-स्वर का और लोप हो रहा है। इन सभी शब्दों में सभी ह्रस्व स्वर क्रम से आ रहे हैं। अतः यदि किसी शब्द में तीन या तीन से अधिक ह्रस्व स्वर एक क्रम में आएं तो बाईं ओर से दूसरे अ-स्वर का लोप कर दिया जाता है। जैसे सिमटन शब्द में या अनबन शब्द में बाईं ओर से गिनने पर दूसरा अ-स्वर बीच में आया है अतः इसका उच्चारण नहीं किया जाता।

वस्तुतः मातृभाषी शब्दों का उच्चारण करते समय स्वाभाविक रूप में अ-स्वर लोप कर देते हैं। परंतु अन्य भाषा भाषी हिंदी सीखता है तो उसे अवश्य मालूम होना चाहिए कि हिंदी के इन शब्दों का उच्चारण मातृभाषा-भाषी कैसे करते हैं। यह नियम जानकर ही नहीं अभ्यास द्वारा भी सीखा जा सकता है।

बोध प्रश्न 3

1. नीचे दिए गए कथनों में से सही कथन पर (✓) का निशान तथा गलत कथन पर (×) का निशान लगाइए –

	सही	गलत
i. जब किसी स्वर का उच्चारण बल या जोर देकर किया जाता है तब इसे आघात कहते हैं।	☐	☐
ii. स्वरों के उच्चारण में अनुनासिकता की स्थिति नहीं मानी जाती।	☐	☐
iii. हिंदी में सभी स्थानों पर ''अ'' स्वर का उच्चारण नहीं होता।	☐	☐
iv. हिंदी में शब्द के अंत में सदैव ''अ'' स्वर को लोप कर दिया जाता है।	☐	☐

2. निम्नलिखित शब्दों के उच्चारण रूप में जहाँ अ लोप हो रहा है उस वर्ण के नीचे हलंत चिह्न लगाकर लिखिए –

लिखित रूप	**उच्चरित रूप**
आम	
पाँच	
मानव	
लड़का	
जनता	
अनबन	
तड़पन	

3.6 मानक स्वर : अवधारणा और स्वरूप

जो स्वर किसी भाषा-विशेष के न होकर विभिन्न भाषाओं के स्थान-निर्धारण के लिए बताए हुए मानदंड होते हैं उन्हें मानक स्वर कहते हैं। इन्हें मान स्वर अथवा आदर्श स्वर भी कहा जाता है। स्वरों के उच्चारण के समय जीभ के स्थान का सही अध्ययन करने के लिए विभिन्न भाषा वैज्ञानिकों ने समय-समय पर स्वर त्रिभुज या स्वर चतुर्भुज की अवधारणा दी गई। परवर्ती काल में विभिन्न भाषाओं के स्वरों के उच्चारण के समय एक्स-रे आदि की सहायता से स्वरों के उच्चारण का औसत निकालकर जीभ की स्थिति को निर्धारित करने का प्रयास किया गया। अग्र, मध्य, पश्च स्थितियों के बारे में अथवा, संवृत, अर्द्धसंवृत, विवृत, अर्द्धसंवृत, अर्द्धविवृत आदि के स्वरूप को स्पष्ट करने का प्रयास भी हुआ। अतः स्पष्ट है कि पर्याप्त शोध, परीक्षण आदि के पश्चात् स्वरों की स्थिति, उच्चारण, प्रयत्न एवं उनके वर्गीकरण को प्रस्तुत किया गया है।

बोध प्रश्न 4

क) निम्नलिखित प्रश्नों के संक्षिप्त उत्तर दीजिए :

1. ह्रस्व स्वर पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

2. दीर्घ स्वर से आप क्या समझते हैं? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

3. 'डिपथांग' और 'ट्रिपथांग' में अंतर बताइए।

.....

.....

.....

.....

4. अनुनासिक उच्चारण के संबंध में अपने विचार व्यक्त कीजिए।

.....

.....

.....

.....

5. संयुक्त स्वर का आशय स्पष्ट करते हुए समुचित उदाहरणों से अपने विचारों की पुष्टि कीजिए।

.....

.....

.....

.....

ख) निम्नलिखित कथनों में से सही (✓) कथन के सामने सही तथा गलत (×) कथन के सामने गलत निर्देश कीजिए :

i) मानक स्वर का अन्यनाम आदर्श स्वर है। ( )

ii) मानक स्वर किसी भाषा-विशेष के ही होते हैं। ( )

iii) ऐ और औ मूलस्वर हैं और संयुक्त स्वर भी है। ( )

iv) मध्यकालीन भाषाओं में संयुक्त स्वर पुन: अस्तित्व में आ गए। ( )

v) दो मात्राओं से भी अधिक समय लगने वाले स्वर को प्लुत स्वर कहते हैं। ( )

vi) आ और इ दीर्घ स्वर के उदाहरण हैं। ( )

ग) निम्नलिखित दीर्घ स्वरयुक्त शब्दों का विच्छेद कीजिए:

i) योगाभ्यास : .....

ii) अभीष्ट : .....

iii) भानूदय : .....

iv) सूर्योदय : .....

v) दंतौष्ठ : .....

3.7 सारांश

इस इकाई के अंतर्गत अभी तक जितनी चर्चा की गई उससे यह स्पष्ट होता है कि स्वर के तीन प्रकार होते हैं – ह्रस्व, दीर्घ और संयुक्त स्वर। मात्रा के आधार पर स्वरों का यह वर्गीकरण काफी रोचक है। स्वरों के उच्चारण में जीभ तथा होठों की स्थिति महत्वपूर्ण होती है। स्वरों का उच्चारण वाग्यंत्र के किसी एक निश्चित स्थान से न होकर संपूर्ण मुख विवर में गूँज के रूप में होता है। यही कारण है कि उनका वर्गीकरण उच्चारण स्थान की अपेक्षा उच्चारण प्रयत्न की दृष्टि से उपयोगी हो सकता है। आपने यह भी पढ़ा कि संवृत, अर्द्ध-संवृत, विवृत और अर्द्ध-विवृत स्वरों के चार भेद होते हैं। इस इकाई में आपने मानक स्वर के स्वरूप को भी भली-भाँति जानने-समझने और उसे परिचित होने का अवसर प्राप्त किया।

3.8 बोध प्रश्नों / अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

क) i) (✓)
ii) (×)
iii) (✓)
iv) (×)
v) (✓)
vi) (×)
vii) (✓)
viii) (×)
ix) (✓)
x) (×)

बोध प्रश्न 2

i) (×)
ii) (✓)
iii) (✓)
iv) (✓)
v) (✓)
vi) (✓)
vii) (✓)
viii) (✓)

बोध प्रश्न 3

i) (✓)

i) (×)

iii) (✓)

iv) (×)

बोध प्रश्न 4

ख i) (✓)

ii) (×)

iii) (✓)

i) (×)

iv) (✓)

v) (×)

ग) i) योगाभ्यास = योग अभ्यास (अ + अ = आ)

ii) अभीष्ट = अभि + इष्ट (इ + इ = ई)

iii) भानूदय = भानु+उदय (उ + उ = ऊ)

iv) सूर्योदय = सूर्य + उदय (अ + उ = ओ)

v) दंतौष्ठ = दंत + ओष्ठ (अ + ओ = औ)

इकाई 4 व्यंजन के उच्चारण के प्रकार

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 व्यंजन से अभिप्राय

4.3 उच्चारण स्थान के आधार पर व्यंजन के भेद

4.3.1 अवरोध की प्रकृति के आधार पर भेद

4.3.2 प्राणत्व के आधार पर

4.4 अर्द्ध स्वर य–व

4.4.1 ड़ ध्वनि

4.4.2 ढ़ ध्वनि

4.4.3 ल ध्वनि

4.4.4 ध्वनि

4.5 नासिक्य ध्वनियाँ

4.5.1 अनुस्वार

4.5.2 अनुनासिकता

4.5.3 स्पर्श व्यंजन ध्वनियाँ

4.5.4 हिंदी व्यंजनों के क्षेत्रीय रूप

4.6 सारांश

4.7 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

4.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का उद्देश्य उच्चारण के आधार पर हिन्दी भाषा के व्यंजन वर्णों के भेदों का परिचय प्राप्त करना है। हमने पिछली इकाई में हिन्दी की समूची वर्ण व्यवस्था और उससे जुड़े महत्त्वपूर्ण तथ्यों के साथ उच्चारण व उच्चारण स्थान संबंधी तथ्यों का भी विस्तार से अध्ययन किया। इस अध्ययन से स्पष्टतः अब हम यह जानते हैं कि हिन्दी के वर्णों को दो भागों में बाँटा गया है – स्वर एवं व्यंजन। पिछली इकाई में उच्चारण संबंधी सभी जानकारियों के बाद अब यहाँ उसी क्रम में आगे व्यंजन वर्णों के उच्चारण के आधार पर उनके प्रकारों के संबंध में विस्तार से अध्ययन किया जाएगा।

4.1 प्रस्तावना

यह तो पिछले अध्ययन से ही स्पष्ट है कि व्यंजन भी स्वरों की तरह वर्णों के भेद हैं पर ये स्वरों से इस रूप में भिन्न हैं कि इनका उच्चारण स्वरों की तरह अवरोध हीन नहीं होता, उच्चारण अवयव इसके उच्चारण में तरह-तरह के अवरोध उत्पन्न करते हैं। इस कारण इनकी अपनी कुछ भिन्न विशेषताएँ भी बनती हैं। यही नहीं उच्चारण के क्रम में उच्चारण स्थान के अतिरिक्त कुछ अन्य कारक भी इसे प्रभावित करते हैं। ये प्रभाव व्यंजनों के वर्गीकरण के अनेक आधार तैयार करते हैं। यहाँ विस्तार से इन कारकों व उनके प्रभावस्वरूप उत्पन्न व्यंजन के अनेक भेदों की चर्चा की जाएगी।

सर्वप्रथम यहाँ आगे बढ़ने से पहले व्यंजन की परिकल्पना को दोहरा लेना आवश्यक है, क्योंकि आगे की समस्त चर्चा उसी को केंद्र में रख कर की जाएगी। वैसे व्यंजन व उसकी विशेषताओं को हम पिछली इकाई में विस्तार से समझ चुके हैं इसलिए यहाँ

केवल उसका संकेत मात्र ही किया जाएगा। व्यंजन की परिकल्पना की विस्तृत जानकारी के लिए आप पिछली इकाई से सहायता ले सकते हैं।

4.2 व्यंजन से अभिप्राय

स्वरों से विपरीत व्यंजन के लिए हम जानते हैं कि इनका उच्चारण अबाध नहीं होता। व्यंजन वर्णों के उच्चारण के समय मुख से बाहर निकलने वाली वायु के मार्ग में बाधा उत्पन्न होती है। वस्तुतः इनके उच्चारण के लिये उच्चारण अवयवों यानी जिह्वा तथा निचले ओष्ठ द्वारा मुख के भिन्न-भिन्न उच्चारण स्थलों पर वायु के मार्ग को बाधित किया जाता है। (उच्चारण स्थलों एवं उच्चारण अवयवों पर भी विस्तार से चर्चा पिछले अध्याय में की जा चुकी है।) मुख विवर के ऊपरी अंग जिनमें ऊपरी ओष्ठ्, दंत एवं वर्त्स, तालु, मूर्धा, कोमल तालु कंठ एवं स्वर यंत्र हैं इन्हें उच्चारण स्थल कहा जाता है। इन उच्चारण स्थलों पर उच्चारण अवयव (जिह्वा एवं निचले ओष्ठ) अपने परिचालन से बाधा उत्पन्न कर भीतर से आती वायु को रोकते हैं। क्षणांश के अवरोध के बाद झटके से हवा मुख विवर से बाहर निकलती है, और इस क्रिया से इन वर्णों का उच्चारण संभव हो पाता है। एक अन्य महत्त्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि इनका उच्चारण स्वतंत्र नहीं होता। इनका उच्चारण स्वरों की सहायता से ही संभव हो पाता है। 'अ' स्वर के बिना इन्हें उच्चरित नहीं किया जा सकता। स्वर रहित व्यंजन को हलन्त से प्रदर्शित किया जाता है। इस तरह हम कह सकते हैं कि व्यंजन उन वर्णों को कहा जाता है जिनका उच्चारण स्वतंत्र न होकर स्वर वर्णों पर आश्रित है एवं जिनके उच्चारण में वायु मुख में किसी न किसी रूप से बाधित होती है।

इस परिभाषा के आधार पर व्यंजन वर्णों की विशेषताओं को यदि हम दोहराना चाहें तो हम पाएँगे कि व्यंजन वर्ण सर्वप्रथम स्वतंत्र रूप से स्वयं उच्चरित नहीं होते, ये स्वरों की सहायता से उच्चरित होते हैं। इनके उच्चारण में वायुमार्ग में अवरोध रहता है और उच्चारण के समय वायु मुख विवर से अबाध गति से नहीं निकलती। दरअसल यह अवरोध उच्चारण अवयवों की स्थिति पर निर्भर करते हैं। स्वर की सहायता से उच्चरित होने के कारण इनका उच्चारण देर तक नहीं किया जा सकता और इनके उच्चारण का उत्तरांश (बाद का अंश) 'अ' स्वर का उच्चारण ही रह जाता है। जैसे क, ख, ग या प, फ, ब आदि किसी भी व्यंजन के उच्चारण में अंततः 'अ' की ध्वनि ही देर तक गूंज सकती है। यहाँ क, ख, ग, या प, फ, ब का उच्चारण सीमित समय तक ही सुनाई देगी। साथ ही व्यंजन का उच्चारण किसी उच्चारण स्थान विशेष से होता है। वह स्वरों की तरह पूरे मुख विवर में गूंजते नहीं हैं।

4.3 उच्चारण स्थान के आधार पर व्यंजन के भेद

उच्चारण स्थानों की चर्चा के क्रम में हम समझ चुके हैं कि वर्णों के उच्चारण के लिए वायु को रोककर या उसे कई प्रकार से विकृत करके यह कार्य किया जाता है। वायु को मुख में रोककर या उसे किसी अन्य प्रकार से विकृत करने की इस क्रिया को प्रयत्न कहा जाता है। इन प्रयत्नों के अनुसार व्यंजन के भेदों कई आधार दिखाई देते हैं। जिन्हें निम्नलिखित रूप से देखा जा सकता है।

सर्वप्रथम प्रयत्न की प्रकृति के आधार पर यह कार्य किया जाता है,

दूसरे श्वास की मात्रा के आधार पर यह कार्य किया जाता है,

और **तीसरे** स्वर तंत्रियों के कंपन के आधार पर भी यह कार्य किया जाता है।

अब यहाँ इन तीनों प्रमुख आधारों को समझने का प्रयास किया जाएगा तथा उनके अनुसार व्यंजन के भिन्न-भिन्न भेदों का परिचय प्राप्त किया जाएगा।

इस दृष्टि से सर्वप्रथम प्रयत्न में अवरोध की प्रकृति और उसके अनुसार व्यंजन के भेद को समझने का प्रयास यहाँ किया गया है।

4.3.1 अवरोध की प्रकृति के आधार पर भेद

व्यंजन वर्णों के उच्चारण में उच्चारण स्थान पर उत्पन्न अवरोध की प्रकृति भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है और अवरोध की प्रकृति की भिन्नता के अनुसार व्यंजनों के मुख्य रूप से तीन भेद किए जाते हैं, जो इस प्रकार हैं – स्पर्शी, अंतःस्थ एवं ऊष्म। इन तीन मुख्य भेदों के अतिरिक्त स्पर्शी व्यंजनों को भी पुनः स्पर्शी, संघर्षी एवं स्पर्श संघर्षी जैसे उपभेदों में बांटा गया है। इन सभी भेदों को नीचे क्रमिक रूप से समझाया जा रहा है।

स्पर्शी – जिन व्यंजनों के उच्चारण के समय कोई उच्चारण अवयव यानी जिह्वा आदि किसी उच्चारण स्थल को स्पर्श करते हुए क्षण भर के लिए मुख विवर में वायु के मार्ग को अवरोधित करता है वे सभी व्यंजन स्पर्शी व्यंजन कहे जाते हैं। हिन्दी वर्णमाला में क वर्ग, ट वर्ग, त वर्ग इन सभी के प्रथम चार व्यंजन स्पर्शी माने गए हैं। इस तरह स्पर्शी व्यंजन की सूची निम्न होगी –

क, ख, ग, घ

ट, ठ, ड, ढ

त, थ, द, ध

प, फ, ब एवं भ।

संघर्षी – कुछ व्यंजनों के उच्चारण के समय उच्चारण अवयव उच्चारण स्थान को स्पर्श कर सकने की स्थिति तक ऊपर नहीं उठ पाते हैं। पर दोनों एक दूसरे के इतने निकट आ जाते हैं कि दोनों के बीच से निकलने वाली वायु घर्षण या संघर्ष करती हुई बाहर की ओर निकलती है। ऐसे वर्णों को संघर्षी की संज्ञा दी जाती है। हिन्दी वर्णमाला में श, ष, स, ह, व संघर्षी व्यंजन माने जाते हैं। इसके अतिरिक्त फ़, ख़,ग़, ज़ जैसी आगत ध्वनियाँ भी इसी कोटि में शामिल होती हैं।

इस तरह संघर्षी व्यंजनों की सूची निम्न हुई –

श, ष, स, ह, व

फ़, ख़,ग़, ज़

स्पर्श संघर्षी – कुछ व्यंजनों के उच्चारण में स्पर्श तथा घर्षण दोनों प्रयत्न दृष्टिगत होते हैं। इनके उच्चारण के समय इनमें उच्चारण अवयव उच्चारण स्थान को स्पर्श करने के बाद दूर तो हटते हैं किन्तु फिर भी इतने निकट रह जाते हैं कि वायु घर्षण करती हुई ही मुख से बाहर निकल पाती है। इन व्यंजनों के उच्चारण में पहली स्थिति स्पर्श की होती है और दूसरी स्थिति संघर्ष की। हिन्दी वर्णमाला में च वर्ग के सभी व्यंजन इस वर्ग में आते हैं।

इस तरह स्पर्श संघर्षी व्यंजनों की सूची निम्न हुई –

च, छ, ज, झ, ञ

ऊष्म व्यंजन – ऊष्म का सामान्य अभिप्राय है गर्म। पहले भी कहा गया है कि कई बार उच्चारण स्थान एवं उच्चारण अवयव के बहुत निकट होने की स्थिति में उच्चारण करते समय मुख से वायु घर्षण करते हुए निकलती है। ऐसी स्थिति में घर्षण की क्रिया से मुख में वायु गर्म हो जाती है। इस प्रकार जब उच्चारण करते समय मुख से वायु घर्षण करते हुए निकले और इस घर्षण की क्रिया से मुख में वायु गर्म हो जाए तो ऐसे उच्चरित व्यंजन ऊष्म कहे जाते हैं।

इस वर्ग में ष, श, स एवं ह को रखा जाता है।

अंतःस्थ – कुछ व्यंजनों के उच्चारण के समय जिह्वा, तालु, दांत और ओष्ठ निकट तो आते हैं किन्तु इनमें कहीं भी स्पर्श नहीं होता। इन व्यंजनों को अंतःस्थ कहते हैं। इन व्यंजनों के उच्चारण के समय स्वर और व्यंजन के उच्चारण के मध्य की स्थिति रहती है। मुख के भीतर जिह्वा का स्पर्श या ओष्ठ का दांत से स्पर्श बहुत कम होता है। यही कारण है कि कुछ विद्वान इस वर्ग के सभी व्यंजनों को अर्द्धस्वर भी कहते हैं।

इस वर्ग में य, र, ल, व ये चार व्यंजन आते हैं।

इन्हें अर्द्धस्वर मानने से पृथक् कुछ विद्वान अंतःस्थ व्यंजनों के पृथक्-पृथक् उपभेद करते हैं, जिन्हें अर्द्धस्वर, लुंठित और पार्श्विक कहा जाता है। आइए इन्हें भी जान लिया जाए।

अर्द्धस्वर – अर्द्धस्वर के उच्चारण में जिह्वा स्वरों के उच्चारण की तुलना में अधिक ऊपर की ओर उठती है किन्तु इतनी ऊपर तक नहीं पहुँच पाती की वायु मार्ग अवरूद्ध कर सके। इस तरह इनमें स्वर और व्यंजन के बीच की स्थिति बनती है। हिन्दी वर्णमाला में य और व व्यंजनों को इसी कारण अर्द्धस्वर माना गया है।

लुंठित – कुछ वर्णों के उच्चारण के समय जिह्वा का अग्र भाग जब मुख के मध्य भाग में पहुँच कर पुनः-पुनः आगे और पीछे की ओर आता-जाता है तब इस भांति उच्चरित व्यंजन को लुंठित कहा जाता है। हिन्दी वर्णमाला में केवल र व्यंजन को ही लुंठित व्यंजन माना गया है।

पार्श्विक – जब व्यंजन वर्णों के उच्चारण के समय मुख के मध्य भाग में दो अवयव एक-दूसरे से पास आकर या यों कहें कि एक दूसरे से मिलकर वायु के मार्ग को इस भांति अवरूद्ध करें कि उच्चारण करते हुए वायु उन उच्चारण अवयवों एक या दोनों पार्श्वों (बगल) से निकले, तब इस तरह से उच्चरित ध्वनि को पार्श्विक कहा जाता है। हिन्दी वर्णमाला में केवल ल व्यंजन पार्श्विक व्यंजन माना गया है।

इन मुख्य भेदों के अतिरिक्त उत्क्षिप्त नामक एक अन्य भेद भी दृष्टिगत है। इसे भी हमें जान लेना चाहिए।

उत्क्षिप्त – किसी व्यंजन के उच्चारण के समय यदि जिह्वा ऊपर की ओर उठकर पहले मूर्धा को स्पर्श करे और फिर एक झटके से नीचे की ओर आ जाए तब उच्चरित व्यंजन को उत्क्षिप्त कहते हैं। हिन्दी वर्णमाला में ड़ एवं ढ़ इसी कोटि के व्यंजन हैं और इन्हें उत्क्षिप्त कहा जाता है।

अब तक हमने व्यंजन के उच्चारण के भेदों को समझने के क्रम में उसके सबसे अधिक ज्ञात आधार यानी उच्चारण अवयव के प्रयत्न और उस प्रयत्न की प्रकृति के आधार पर व्यंजनों को विभक्त करके समझने का प्रयत्न किया। इस विस्तृत अध्ययन के बाद कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण आधार और भी हैं जिनकी चर्चा यहाँ अनिवार्य है। इस दृष्टि से उपरोक्त भेदों से पृथक्, व्यंजन के उच्चारण के भेदों को वर्गीकृत के दो अन्य प्रमुख आधार माने गये हैं। पहला प्राणत्व के आधार पर यानी सरल शब्दों में इसे कहें तो उच्चारण के समय लगने वाली श्वास की मात्रा के आधार पर तथा दूसरा उच्चारण के समय स्वरतंत्रियों मे होने वाले कंपन के आधार पर। अब आगे इन्हीं आधारों पर व्यंजनों के वर्गीकरण एवं भेदों की चर्चा की जाएगी।

4.3.2 प्राणत्व के आधार पर

प्राण से यहाँ अभिप्राय है – 'वायु', 'हवा','श्वास' या 'प्राण वायु की शक्ति'। वर्णों के उच्चारण की क्रिया के मध्य मुख से निकलने वाली वायु की शक्ति या मात्रा के आधार पर भी व्यंजनों का भेद किया जाता है। इन्हें ही प्राणत्व के आधार पर किया गया वर्गीकरण कहा जाता है। इस आधार पर कुछ व्यंजन अल्पप्राण तथा कुछ व्यंजन महाप्राण कहे जाते हैं। इन दोनों को निम्नलिखित रूप से समझा जा सकता है –

अल्पप्राण – जिन व्यंजनों के उच्चारण में मुख से कम मात्रा में वायु निकलती है यानी

जिनके उच्चारण में श्वास बल कम रहता है उन व्यंजनों को अल्पप्राण कहा जाता है। हिन्दी वर्णमाला में सभी वर्गों के व्यंजनों में पहला, तीसरा एवं पाँचवाँ व्यंजन अल्पप्राण माना जाता है।

इस तरह अल्पप्राण व्यंजनों की सूची निम्न होगी –

क, ग, ङ

च, ज, ञ

ट, ड, ण

त, द, न

प, ब, म

इनके अतिरिक्त य, र, ल, और ड़ भी इसी वर्ग में आते हैं।

महाप्राण – यह अल्पप्राण व्यंजनों के विपरीत हैं। महाप्राण व्यंजनों के उच्चारण में मुख से वायु ज्यादा मात्रा में निकलती है। यानी इनके उच्चारण में श्वास बल अधिक होता है। या यों कहें की हवा का आधिक्य होता है। महाप्राण व्यंजनों में प्रत्येक वर्ग का दूसरा और चौथा व्यंजन शामिल है।

इस तरह महाप्राण व्यंजनों की सूची निम्न ह ै–

ख, घ

छ, झ

ठ, ढ

थ, ध

फ, भ

इन सभी उपरोक्त व्यंजनों के साथ इस वर्ग में ढ़ व्यंजन भी शामिल है।

प्राणत्व के आधार की ही तरह व्यंजनों के वर्गीकरण का एक अन्य प्रमुख आधार स्वरतंत्रियों के अनुसार भी निर्धारित होता है। वर्णों के उच्चारण में स्वरतंत्रियाँ एक महत्त्वपूर्ण अवयव हैं। उच्चारण के समय जब फेफड़ों से बाहर आती हुई हवा इन स्वरतंत्रियों से टकराती है तो इनमें कम्पन होता है, यानी एक प्रकार की झंकार उत्पन्न होती है। यह कम्पन उच्चारण के मध्य स्वरतंत्रियों के निकट आ जाने से उनके बीच से निकलती हवा के कारण होता है। इस कम्पन के होने या न होने के आधार पर भी व्यंजनों का भेद निर्धारित होता है। इस दृष्टि से व्यंजनों को दो भागों में बाँटा जाता है – घोष तथा अघोष।

घोष – घोष व्यंजन वे हैं जिनके उच्चारण में स्वर तंत्रियों के निकट आ जाने के कारण उनके बीच से निकलती हवा में कम्पन होता है। हिन्दी वर्णमाला में क वर्ग आदि पाँचों वर्गों के अंतिम तीन व्यंजन घोष माने गए हैं।

इस तरह घोष व्यंजनों की सूची निम्न है –

ग, घ, ङ

ज, झ, ञ

ड, ढ, ण

द, ध, न

ब, भ, म

अघोष – घोष व्यंजनों से बिल्कुल विपरीत जिन व्यंजनों के उच्चारण के समय स्वर तंत्रियाँ परस्पर दूर रहती हैं और जिनके उच्चारण में मुख तक आने वाली वायु में कोई

कंपन नहीं होता उन्हें अघोष कहा जाता है। हिन्दी वर्णमाला के सभी वर्गों के पहले दो व्यंजन अघोष माने जाते हैं।

इस तरह –

क, ख

च, छ

ट, ठ

त, थ

प, फ व्यंजन अघोष की सूची में शामिल हैं।

स्वरतंत्रियों के आधार पर व्यंजनों के भेद के इस विस्तृत अध्ययन के साथ व्यंजनों के उच्चारण के सभी प्रमुख भेदों से हम परिचित हो चुके हैं।

यह विस्तृत अध्ययन हिन्दी भाषा की वर्ण व्यवस्था और उसके मध्य व्यंजन के उच्चारण संबंधी सभी पहलुओं से हमारा परिचय करवाता है। मुख्य रूप से प्रयत्न के आधार पर, उच्चारण में लगने वाले समय के आधार पर तथा स्वरतंत्रियों में कंपन के आधार पर किए जाने वाले ये भेद व्यंजन की विस्तृत समझ के लिए अनिवार्य हैं।

बोध प्रश्न 1

क) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें।

1. व्यंजन से क्या अभिप्राय है? इसकी विशेषताओं को स्पष्ट करें।

   .....

   .....

   .....

2. उच्चारण की दृष्टि से व्यंजन के भेदों के मुख्य आधार स्पष्ट करें।

   .....

   .....

   .....

3. उच्चारण के प्रयत्न के अनुसार व्यंजन के भेदों की चर्चा करें।

   .....

   .....

   .....

4. प्राणत्व के आधार पर व्यंजन के भेद बताऐं।

   .....

   .....

   .....

5. स्वरतंत्रियों के आधार पर व्यंजन के वर्गीकरण की चर्चा करें।

   .....

   .....

   .....

ख) निम्नलिखित कथनों पर सही (✓) या गलत (×) का चिह्न लगाएँ।

i) व्यंजन के उच्चारण में स्वर से अधिक समय लगता है। ( )

ii) स्पर्शी व्यंजन के उच्चारण में वायु मार्ग बाधित नहीं होता। ( )

iii) पार्श्विक मूलतः अंतःस्थ व्यंजन के भेद ही हैं। ( )

iv) व्यंजनों के भेदों में ऊष्म को शामिल नहीं किया जाता। ( )

v) क, ग, त, प, आदि व्यंजन महाप्राण हैं। ( )

vi) सभी वर्गों के अंतिम व्यंजन घोष हैं। ( )

vii) ह एक उष्म व्यंजन नहीं है। ( )

viii) अंतःस्थ को अर्द्धस्वर भी कहा जाता है। ( )

ix) घोष एवं अघोष व्यंजनों की स्थिति स्वरतंत्रियों के कारण होती है। ( )

x) महाप्राण व्यंजनों में मुख से अधिक वायु निकलती है। ( )

ग) रिक्त स्थान भरें।

1. संघर्षी व्यंजन के उच्चारण में वायु ..... करती हुई बाहर निकलती है।

2. ऊष्म ध्वनियों के उच्चारण में वायु ..... होकर बाहर निकलती है।

3. प्रत्येक वर्ग का ..... , ... एवं ..... व्यंजन घोष होता है।

2. ड़ एवं ढ़ ..... व्यंजन कहे जाते हैं।

3. प्राणत्व के आधार पर व्यंजन के ..... भेद होते हैं।

4.4 अर्द्ध स्वर य–व

कुछ समय पहले तक य र ल व को अर्द्ध स्वर माना जाता था किंतु आधुनिक भाषा शास्त्रियों का मत है कि र और ल में व्यंजनों के गुण अधिक हैं अतः अर्द्ध-स्वर य और व ही माने जाते हैं। ये दोनों अर्द्ध स्वर के रूप में अन्य भाषाओं में भी मान्य हैं।

य ध्वनि

इस ध्वनि के उच्चारण के लिए पहले तो जीभ ''इ'' जैसी ध्वनि के लिए तैयार होती है और फिर एक प्रकार के ''अ'' जैसी। जिह्वा का मध्य भाग उठकर कठोर तालु के बहुत पास पहुँच जाता है। यह सघोष, अवृत्ताकार, तालव्य ध्वनि है।

उदा. – यम, वयस्क, सुरम्य आदि।

व ध्वनि

इस ध्वनि के उच्चारण में दाँतों की ऊपरी पंक्ति निचले ओंठ के संपर्क में आती है। श्वास-वायु निकलने के लिए बहुत पतला मार्ग रह जाता है अतः उच्चारण में घर्षक बहुत कम और श्वास-वायु की गति अत्यंत मंद हो जाती है। ''व'' को कुछ विद्वान घर्षण हीन व्यंजन कहते हैं।

यह दंतोष्ठ्य, सघोष, अल्पप्राण ध्वनि है।

उदा. – वित्त, नवीन, अवश्य आदि।

4.4.1 ड़ ध्वनि

जीभ की नोंक उलटकर जब लातु को स्पर्श करती है तब वह पीछे की ओर गिरती है और उसका निचला भाग मूर्धा को छूकर यह ध्वनि उत्पन्न करता है। यह सघोष, अल्पप्राण, मूर्धन्य, उत्प्रेक्षित ध्वनि है।

जैसे – उड़ना, तोड़ना।

4.4.2 ढ़ ध्वनि

ड़ ध्वनि का एक महाप्राण प्रतिरूप होता है – ढ़। इस ध्वनि के उदाहरण हैं – गढ, बाढ़, चिढ़ना।

4.4.3 ल ध्वनि

जीभ की नोक वर्त्स को छूकर मार्ग बंद कर देती है किंतु श्वास वायु जीभ के एक या दोनों पार्श्वों में से निकल जाती है। जीभ को ल की स्थिति में रखकर श्वास को अंदर खींचने पर यदि वायु जीभ के एक ही पार्श्व में से अंदर जाने लगे तो समझिए कि ल के उच्चारण में भी वायु उसी ओर से बाहर जाएगी।

यह सघोष वर्त्स्य अल्पप्राण पार्श्विक ध्वनि है।

उदा. – ललक, लाल, तत्काल

4.4.4 ध्वनि

जब जीभ की नोक बहुत तेजी से चलती है और या तो श्वास वायु के लिए स्वतंत्र रूप से फड़फड़ाती है तब ऐसी ध्वनि उत्पन्न होती है। हिंदी में र ध्वनि सघोष, अल्पप्राण वर्त्स्य, लुंठित होती है।

उदा. – घर, रोपना, करील

कुछ शब्दों में दुहरे लुंठन भी पाए जाते हैं।

उदा. – छर्रा, चर्र, मर्र

4.5 नासिक्य ध्वनियाँ

स्वर यंत्र पार करने के बाद वायु दो भागों से बाहर निकलती है –

1. मुखविवर
2. नासिका विवर

मुख विवर से निकलने वाली मौखिक ध्वनियाँ मानी जाती है। यदि वायु अंशतः मुख विवर से और अंशतः नासिका विवर से निकले तो इस प्रकार की ध्वनियाँ मौखिक-नासिक्य ध्वनियाँ कहलाती हैं।

यदि वायु पूर्णतः नासिका विवर से निकले तो उत्पन्न ध्वनियाँ शुद्ध नासिक्य ध्वनियाँ कहलाती हैं।

4.5.1 अनुस्वार

स्वर का उच्चारण स्वतंत्र रूप से होता है और व्यंजन स्वर के सहारे उच्चरित होते हैं। इसलिए व्यंजन स्वर से पहले आते हैं। किंतु अनुस्वार की स्थिति निराली है। इसमें स्वतंत्र गति नहीं है अतः यह स्वर नहीं है। यह सदैव स्वर के बाद आता है। अतः व्यंजन भी नहीं है। यह स्वर और व्यंजन के बीच आता है। ''अंग'' का विश्लेषण इस प्रकार होगा –

अ + ं +ग अर्थात् स्वर +अनुस्वार +व्यंजन। अनुस्वार का अर्थ ही है स्वर के पीछे आने वाला। यह सामान्यः अंतस्थ और ऊश्म व्यंजनों में अनुनासिकता लाने के लिए प्रयोग में आता है, जैसे – प्रशंसा, संयम, हंस ।

अनुस्वार का प्रयोग

आजकल ड़, ञ, ण, न, म के स्थान पर बिंदी लगाने की प्रथा चल पड़ी है। इससे कई सुविधाएँ हो गई हैं।

4.5.2 अनुनासिकता

स्वर

अनुनासिक स्वर केवल एक है अँ। इसकी मात्रा ँ है। यह इस प्रकार के शब्दों में आता है।

उदा. – आँख, अँगना, अँगूठा, आँकड़ा, आँवला, आँसू आदि।

4.5.3 स्पर्श व्यंजन ध्वनियाँ

हिंदी में स्पर्श व्यंजन पाँच-पाँच व्यंजनों के पाँच वर्गों में विभाजित हैं। प्रत्येक वर्ग का अंतिम व्यंजन अनुनासिक व्यंजन है जो सामान्यतः शेष चारों के साथ प्रयुक्त होता है।

1. **कोमल तालव्य व्यंजन**

   क ख ग घ ङ – अङ्क/ पङ्ख/गङ्गा/ कङ्घी

   आजकल ङ के स्थान पर बिंदी का प्रयोग किया जा रहा है

   अंक पंख गंगा कंघी

   तथापि कतिपय शब्दों में इसका प्रयोग यथावत है।

   उदा. – वाङ्मय, पराङ्मुख

2. **वर्त्स्य तालव्य व्यंजन**

   च छ ज झ ञ – प.....

   इसे आजकल बिंदी लगाकर लिखते हैं पंच पंछी रंज

3. **मूर्धन्य व्यंजन**

   ट ठ ड ढ ण उदा. – घण्टा कण्ठी पण्डित ठण्ड

   इसे आजकल बिंदी लगाकर लिखते हैं – घंटा कंठी पंडित ठंड

4. **दंत व्यंजन**

   त थ द ध न **उदा.** – तन्तु पन्थ गन्दा अन्धा

   इसे आजकल बिंदी लगाकर लिखते हैं – तंतु पंथ गंदा अंध

5. **ओष्ठ्य व्यंजन**

   प फ ब भ म **उदा.** – कम्प गुम्फन लम्बी दम्भ

   आधुनिक रूप – कंप, गुंफन, लंबी, दंभ।

   म का महाप्राण म्ह भी है। यह ऐसे शब्दों में प्रयुक्त होता है –

   तुम्हारा, कुम्हार

4.5.4 हिंदी व्यंजनों के क्षेत्रीय रूप

हिंदी की मानक ध्वनियाँ क्षेत्रीय रूप में प्रचलित हैं। कतिपय उदाहरण इस प्रकार हैं –

1. ल –हरियाणवी – बालक, बाळ
   काळ, फळ
   कुमाऊँनी – दीपावळी, काळो
   मारवाड़ी – बाळ, जळ
2. कुछ क्षेत्रीय बोलियों में ण की ध्वनि ''न'' रूप में उच्चरित होती है –
   प्रणाम – प्रनाम
   गुण – गुन
   ऋण – ऋन
3. कुछ बोलियों, जैसे हरियाणवीं, मालवी आदि में न ध्वनि ण रूप में उच्चरित होती है।
   हरियाणवी
   अपना – अपणा
   होना – होणा
   चलना – चळणा
   मालवी
   अपनी – अपणो
   जूना – जूणो
4. कुछ बोलियों , जैसे ब्रज, कन्नौजी आदि में ल तथा ड़ के स्थान पर ''र'' ध्वनि उच्चरित सुनाई देती है। जैसे –
   ब्रज
   दुबला – दुबरा
   बीड़ा – वीरा
   झगड़ – झगरो
   कन्नौजी
   थाली – थरिया
   जोड़े – जोरे
5. कुछ भाषा/ बोलियों में ह ध्वनि का लोप दिखाई देता है।
   जैसे, ब्रज में साहूकार-साऊकार तथा बहु-बऊ उच्चरित होता है।
6. राजस्थानी की अनेक बोलियों में स ध्वनि ''ह'' रूप में उच्चारित होती है जैसे –
   दस – दह
   सौ – हौ
7. बिहारी की बोलियों में ल ध्वनि र में परिवर्तित हो गई दिखती है जैसे,
   मछली – मछरी
   फल – फर

4.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई का उद्देश्य उच्चारण के आधार पर हिन्दी के व्यंजन वर्णों के भेदों का समुचित अध्ययन था। इस वर्गीकरण का परिचय हिन्दी वर्ण व्यवस्था के मध्य व्यंजन वर्णों की वास्तविक स्थिति का ज्ञान प्राप्त कराने के साथ व्यंजन का स्वरूप एवं उसकी विशेषताओं का भी विस्तृत परिचय कराता है। इन विशेषताओं का ज्ञान स्वर वर्णों से उनके भेद को भी स्पष्ट करता है। तत्पश्चात यहाँ व्यंजन के प्रमुख वर्गीकरण के आधारों की चर्चा की गई और उन आधारों के अनुसार विस्तार से व्यंजन के संभव सभी भेद का भी ज्ञान कराया गया। इस दृष्टि से उच्चारण स्थलों के आधार पर होने वाले व्यंजन के भेदों के अतिरिक्त घोष, अघोष, अल्पप्राण या महाप्राण जैसे आवश्यक विषयों एवं उनके अभिप्राय को हम यहाँ समझ सके। इस तरह यह इकाई हिन्दी की वर्ण व्यवस्था के समुचित परिचय की महत्त्वपूर्ण कड़ी है और विशेष रूप से व्यंजनों के सम्यक ज्ञान को सम्भव बनाती है।

4.7 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

ख) i) (✓)
ii) (×)
iii) (✓)
iv) (×)
v) (×)
vi) (✓)
vii) (×)
viii) (✓)
ix) (✓)
ix) (✓)

ग) 1. घर्षण
1. गर्म
2. तृतीय, चतुर्थ, पंचम
3. उत्क्षिप्त
4. दो

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

इकाई 5 वर्णों का उच्चारण स्थान

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 वर्ण की परिभाषा

5.2.1 स्वर वर्णों की विशेषताएँ

5.2.2 व्यंजन वर्णों की विशेषताएँ

5.3 ध्वनि उत्पति के स्थान

5.4 उच्चारण के स्थान के आधार पर वर्णों के भेद

5.5 सारांश

5.6 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

5.0 उद्देश्य

इस पाठ का मुख्य उद्देश्य हिन्दी भाषा के वर्णों के उच्चारण स्थान का समुचित परिचय प्राप्त करना है। वर्ण अथवा उनके उच्चारण के संबंध में विचार भाषा एवं व्याकरण के सबसे प्राथमिक एवं आवश्यक अंगों में से एक है। उच्चारण एवं उच्चारण स्थानों के आधार पर ही वर्णों के भेद, उनके वर्गीकरण या कोटियाँ निर्धारित की जाती हैं। अतः वर्णों का समुचित परिचय प्राप्त करने के लिए उनके उच्चारण संबंधी ज्ञान या उनके उच्चारण स्थानों की पहचान परम आवश्यक है। यहाँ इसी विषय पर विस्तार से प्रकाश डाला जाएगा। इस अध्ययन के क्रम में यहाँ दो शब्द व्याख्या सापेक्ष हैं – वर्ण एवं उच्चारण स्थान। सर्वप्रथम इन्हीं पर चर्चा की जाएगी और इसी आलोक में इस अध्याय में उच्चारण स्थानों पर विस्तार से चर्चा होगी। वर्ण की परिकल्पना को संक्षेप में दुहराए जाने से विषय की एक बेहतर समझ विकसित करना आसान होगा और इस तरह उच्चारण स्थान संबंधी अध्ययन को भी अधिक संपूर्णता में ग्रहण किया जा सकेगा।

हिन्दी वर्णमाला से हम सभी परिचित हैं और हमें यह भी ज्ञात है कि इसे दो भागों में बाँटा गया है – स्वर एवं व्यंजन। ये स्वर एवं व्यंजन ही इस अध्याय में समस्त चर्चा का केन्द्र रहेंगे। अतः इस अध्याय में हम वर्णों की परिकल्पना के ज्ञान एवं उसके आलोक में उनके उच्चारण स्थानों तथा उसके आधार पर वर्णों के वर्गीकरण पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

5.1 प्रस्तावना

ध्वनि भाषा का मूल आधार है। सामान्य जीवन में मनुष्य जब भाषा का प्रयोग कर रहा होता है, तब वह बोलते या सुनते समय इन ध्वनियों को अलग-अलग करके या खंडित करके ग्रहण नहीं करता। भाषिक व्यवहार के क्रम में ध्वनियाँ समन्वित रूप से प्रत्यक्ष होती हैं और सार्थक शब्दों, वाक्यों आदि का निर्माण करती हैं। किन्तु, भाषा में प्रत्येक ध्वनि का अपना अलग अस्तित्व है; जैसे –

कलम में – क्+अ+ल्+अ+म्+अ यह सभी ध्वनियाँ संयुक्त हैं

जहाज में – ज्+अ+ह्+आ+ज्+अ

राम में – र्+आ+म्+अ

सीता में – स्+ई+त्+आ

इन ध्वनियों को पुनःखंडित करके ग्रहण नहीं किया जा सकता। अतः इन ध्वनियों को मूल ध्वनियां कहा जाता है। इन मूल ध्वनियों को व्यक्त करने के लिए पृथक्-पृथक् ध्वनि-चिह्नों का प्रयोग किया जाता है। इन ध्वनि चिह्नों को हम वर्ण कहते हैं। यहाँ ठहर कर एक और तथ्य समझना चाहिए कि दो भिन्न भाषाओं के मध्य भी ध्वनि साम्य हो सकता है या होता ही है। जैसे अंग्रेजी में हम सीता, राम या पीटर या कोई भी अन्य शब्द उच्चरित करें तो हिन्दी से उसका कोई ध्वनि भेद नहीं होगा क्योंकि दोनों भाषाओं में एक ही तरह की ध्वनियाँ हैं। किन्तु लिखते समय हम दोनों भाषाओं में एक ही शब्द के लिए उच्चारण या ध्वनिगत साम्य होने पर भी पृथक्-पृथक् ध्वनि चिह्नों का प्रयोग करते हैं। हिन्दी में लिखा गया शब्द राम, सीता या पीटर अंग्रेजी में Ram, sita या peter हो जाएगा। इस तरह हम समझ सकते हैं कि इन शब्दों में ध्वनि भेद नहीं है पर वर्ण भेद है। ये ध्वनि चिह्न ही वर्ण हैं।

जिस तरह ध्वनि का संबंध श्रवण एवं वाचन से है, ठीक उसी तरह वर्ण का संबंध लिखने, पढ़ने एवं देखने से है। इस तरह वर्ण उच्चरित ध्वनि का लिखित रूप है। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि वर्ण भाषा की सबसे छोटी अर्थ भेदक इकाई है। इन्हें पुनःखंडित नहीं किया जा सकता।

जैसे – कलम में क्+अ+ल्+अ+म्+अ वर्ण प्रयुक्त हैं और क्, म्, ल् आदि इन वर्णों को इनसे छोटे किसी खंड में नहीं बाँटा जा सकता। यही नहीं इन वर्णों के प्रयोग के क्रम से ही कलम, कमल से भिन्न है। उच्चारण और अर्थ दोनों संदर्भों में। यही कारण है कि वर्णों की सीमित संख्या से हम असंख्य शब्दों के निर्माण में सक्षम हो पाते हैं।

5.2 वर्ण की परिभाषा

वर्ण, मनुष्य की वागेन्द्रियों द्वारा अभिव्यक्त ध्वनि की सबसे छोटी अर्थभेदक इकाई का व्यवस्थित एवं लिपिबद्ध रूप है।

इस परिभाषा से वर्ण की निम्नलिखित विशेषताएँ स्पष्ट हैं –

- यह सबसे छोटी इकाई है।
- अतः इसे पुनः खंडित नहीं किया जा सकता।
- यह भाषा में अर्थ भेदकता का आधार है।
- इसका संबंध लिखने से है।
- इससे भाषा में व्यवस्था आती है।

वर्णों के समूह को वर्णमाला कहा जाता है। हिन्दी में मूलतः 52 वर्ण हैं। इन वर्णों को दो भागों में विभक्त किया जाता है – स्वर एवं व्यंजन

इनका विस्तृत विवरण निम्नलिखित है –

स्वर – अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अ.

व्यंजन – क, ख, ग, घ, ङ
च, छ, ज, झ, ञ
ट, ठ, ड, ढ़, ण ड़ ढ़
त, थ, द, ध, न
प, फ, ब, भ, म
य, र, ल, व
श, ष, स, ह
क्ष, त्र, ज्ञ, श्र

वर्णमाला के इस विस्तृत अध्ययन के बाद हम स्वर एवं व्यंजन वर्णों को पृथक्-पृथक् पहचान सकते हैं।

संक्षिप्त रूप से बात करें तो हम कह सकते हैं कि स्वर उन वर्णों को कहा जाता है जिनका उच्चारण बिना किसी बाधा या अवरोध के होता है। इनके उच्चारण में किसी अन्य वर्ण की सहायता की आवश्यकता नहीं होती। ये पूर्ण रूप से स्वतंत्र होते हैं। स्वरों के उच्चारण में वायु फेफड़ों से बाहर निकलती हुई मुख से निर्बाध रूप से निकलती है। सामान्यतः इनके उच्चारण में कंठ एवं तालु का प्रयोग होता है तथा जिह्वा व ओष्ठ कहीं भी स्पर्श नहीं करते। अपवाद स्वरूप चाहे तो कोई कह सकता है कि 'उ' एवं 'ऊ' के उच्चारण में ओष्ठ प्रयोग में आते हैं, किन्तु ध्यान रहे कि यहाँ भी वे स्पर्श नहीं करते। यही नहीं स्वरों के संबंध में एक अन्य महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि स्वर वर्ण व्यंजनों के उच्चारण में सहायक होते हैं। व्यंजन वर्णों का उच्चारण इनकी सहायता के बिना नहीं हो सकता।

इस तरह हम स्वर वर्णों को परिभाषित करते हुए कह सकते हैं कि –

स्वर वे स्वतंत्र वर्ण हैं जिनके उच्चारण में वायु अबाध गति से मुख से बाहर निकलती है।

5.2.1 स्वर वर्णों की विशेषताएँ

उपरोक्त विवरण के आधार पर यदि स्वर की विशेषताओं को चिह्नित करने का प्रयास किया जाए तो वह निम्न होंगे –

- ये पूर्ण रूप से स्वतंत्र हैं।
- इनका उच्चारण अवरोध रहित होता है।
- इनके उच्चारण में अन्य वर्णों की सहायता आवश्यक नहीं।
- इनका उच्चारण देर तक किया जा सकता है।
- ये व्यंजन वर्णों के उच्चारण में सहायक होते हैं।
- स्वर के उच्चारण में ध्वनि पूरे मुख विवर में गूंजती है।

जिस तरह स्वरों के लिए कहा गया कि उनका उच्चारण बाधा रहित होता है, इस तथ्य के विपरीत हमें व्यंजन के लिए सर्वप्रथम यह समझना चाहिए कि इनका उच्चारण बाधा रहित नहीं होता। व्यंजन के उच्चारण में मुख से बाहर निकलने वाली वायु के मार्ग में बाधा पड़ती है। दरअसल उच्चारण अवयवों अर्थात् जिह्वा एवं निचले ओष्ठ द्वारा मुख के विभिन्न उच्चारण स्थलों पर वायु के मार्ग को अवरूद्ध कर इनका उच्चारण संभव होता है। मुख विवर के ऊपरी अंग जिनमें ऊपरी ओष्ठ, दंत एवं वर्त्स, तालु, मूर्धा, कोमल तालु, कंठ एवं स्वर यंत्र हैं। ये उच्चारण स्थल हैं जिन पर उच्चारण अवयव यानी जिह्वा एवं निचले ओष्ठ अपने परिचालन द्वारा अवरोध उत्पन्न कर भीतर से आती प्राण वायु को रोकते हैं। यह अवरोध क्षणांश का ही होता है और अवरोध के बाद झटके से हवा मुख विवर से बाहर निकलती है, जिससे उच्चारण संभव हो पाता है। इस कोटि में वर्ण माला के क से लेकर ह तक सभी वर्ण शामिल हैं। इनकी कुल संख्या 33 है। व्यंजन वर्णों के संबंध में एक अन्य महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि इनका उच्चारण स्वतंत्र नहीं होता। इनका उच्चारण स्वरों की सहायता से ही संभव हो पाता है। यही नहीं प्रत्येक व्यंजन के उच्चारण में 'अ' स्वर की ध्वनि अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हुई होती है। 'अ' स्वर के बिना इन्हें उच्चरित नहीं किया जाता। जैसे यदि हम क, ख, ग, घ, या किसी भी अन्य व्यंजन का उच्चारण करते हैं तो वह क्+अ=क, ख्+अ=ख, ग्+अ=ग, घ्+अ=घ यानी अ के संयोग से ही उच्चरित होता है। स्वर रहित व्यंजन को हलन्त से प्रदर्शित किया जाता है। हलन्त के लिए मूल व्यंजन (अ स्वर रहित व्यंजन) के साथ उसके नीचे तिरछी रेखा (्) लगायी

जाती है। इस रेखा को हल् कहा जाता है तथा अ स्वर रहित व्यंजन जैसे क्, ख्, ग्, घ् को हलन्त कहा जाता है। इस तरह हल् लगाने का अभिप्राय है कि व्यंजन में स्वर वर्ण का पूरी तरह अभाव है। इस तरह के स्वररहित व्यंजन को आधा व्यंजन कहने का भी सामान्य चलन है।

उपरोक्त तथ्यों के आधार पर यदि व्यंजन वर्ण को परिभाषित करने का प्रयास किया जाए तो कहा जा सकता है कि व्यंजन उन वर्णों को कहा जाता है जिनका उच्चारण स्वतंत्र न होकर स्वर वर्णों पर आश्रित है एवं जिनके उच्चारण में वायु मुख में किसी न किसी रूप से बाधित होती है।

5.2.2 व्यंजन वर्णों की विशेषताएँ

इस परिभाषा के आधार पर व्यंजन वर्णों की विशेषताओं को भी अलग से रेखांकित किया जा सकता है। व्यंजन वर्णों के परिचय एवं स्वरूप के स्पष्ट ज्ञान के लिए इन विशेषताओं को अलग से अवश्य चिह्नित किया जाना चाहिए। इस दृष्टि से व्यंजन की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं –

- व्यंजन स्वतंत्र रूप से स्वयं उच्चरित नहीं होते।
- ये स्वरों की सहायता से उच्चरित होते हैं।
- व्यंजन के उच्चारण में वायुमार्ग में अवरोध रहता है।
- व्यंजन के उच्चारण में वायु अबाध गति से नहीं निकलती।
- यह अवरोध उच्चारण अवयवों की स्थिति पर निर्भर करता है।
- स्वर की सहायता से उच्चरित होने के कारण इनका उच्चारण देर तक नहीं किया जा सकता क्योंकि उच्चारण के लिए व्यंजन स्वर की सहायता लेते है और ऐसे में उच्चारण का उत्तरांश (बाद का अंश) स्वर का उच्चारण ही रह जाता है। जैसे क व्यंजन के उच्चारण में क्+अ होगा और अंततः'अ' की ध्वनि ही देर तक गूंज सकती है। क उच्चारण सीमित समय तक ही सुनाई देगा।
- व्यंजन का उच्चारण किसी स्थान विशेष से होता है। वह स्वरों की तरह पूरे मुख विवर में गूंजते नहीं है।

व्यंजनों के इस विस्तृत विवेचन के पश्चात् हम हिन्दी भाषा की वर्ण व्यवस्था को पूर्णतः और पृथकतः पहचान सकते हैं और स्वर एवं व्यंजन वर्णों को एक दूसरे से पृथक् भी कर सकते हैं। सामान्यतः व्यंजन वर्णों की संख्या तैंतीस (33) मानी गयी है। इन्हें निम्न विवरण द्वारा स्पष्टतः समझा जा सकता है –

क वर्ग – क, ख, ग, घ, ङ

च वर्ग – च, छ, ज, झ, ञ

ट वर्ग – ट, ठ, ड, ढ, ण

त वर्ग – त, थ, द, ध, न

प वर्ग – प, फ, ब, भ, म=25

य, र, ल, व=4

श, ष, स, ह=4

25 + 8 = 33

यहाँ एक स्वाभाविक जिज्ञासा का निराकरण भी आवश्यक है और वह वर्णमाला में दिखने वाले बाकी वर्णों से सम्बद्ध है। वर्णमाला पर चर्चा के क्रम में यह सदैव बताया जाता है कि हिन्दी में वर्णों की संख्या बावन (52) है। यदि स्वर की संख्या हमने ग्यारह (11) मानी और उसके साथ ही हम यहाँ अनुस्वार (अं) एवं विसर्ग (अः) को भी जोड़े तो यह संख्या तेरह (13) होगी। अब यहाँ हमने तैंतीस व्यंजनों की गिनती की। यदि इन्हें भी जोड़ दिया जाए तो अब तक की कुल संख्या छियालिस (46) हुई। बावन वर्णों की कुल संख्या में अब भी छः (6) वर्णों की संख्या शेष है। बावन का यह पूरा आंकड़ा चार संयुक्त व्यंजनों और दो द्विगुण व्यंजनों के योग से पूरा होता है। व्यंजनों की गणना में भले केवल उपरोक्त तैंतीस व्यंजनों की ही चर्चा की जाए। ये संयुक्त व्यंजन और द्विगुण व्यंजन हिन्दी वर्णमाला का महत्त्वपूर्ण अंग हैं। संयुक्त व्यंजनों की संख्या जैसा कि हमने कहा चार है – इनमें क्ष, त्र, ज्ञ और श्र शामिल हैं और दो द्विगुण व्यंजन ड़ और ढ़ हैं। व्यंजन वर्णों के वर्गीकरण एवं भेद-उपभेदों की चर्चा के क्रम में इन संयुक्त व्यंजनों एवं द्विगुण व्यंजनों पर विचार किया जाता है। यह हिन्दी की वर्ण व्यवस्था के समुचित परिचय एवं सम्यक् ज्ञान के लिए अनिवार्य है।

इस तरह हिन्दी भाषा की वर्णमाला के उपरोक्त विस्तृत परिचय के आलोक में अब यहाँ इनके उच्चारण स्थान संबंधी अध्ययन के लिए हम पूरी तरह से तैयार हैं।

5.3 ध्वनि उत्पत्ति के स्थान

यहाँ ठहर कर ध्वनि उत्पत्ति के स्थान या यों कहें कि उच्चारण स्थानों पर एक नजर डालनी चाहिए जो ध्वनि उच्चारण को संभव बनाते हैं। हम जानते हैं कि उच्चारण का सामान्य अर्थ ध्वनि अथवा मुख से वर्णों को बोलना या कहना है और इस क्रिया में हमारे मुख के बहुत से भाग सक्रिय होते हैं। ये मुख के भाग या जिन्हें हम अवयव कह सकते हैं यही उच्चारण स्थान है।

निम्न चित्र द्वारा उच्चारण अवयवों को अधिक सरलता से समझा जा सकता है –

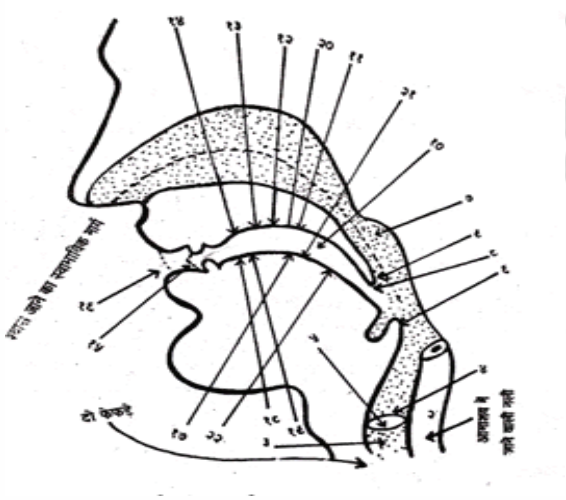

1. कंठ मार्ग
2. भोजन नलिका
3. स्वर यंत्र
4. स्वरयंत्र मुख
5. स्वर तंत्रि
6. अभिकाकल
7. नासिका विवर

8. मुख विवर
9. अलि जिह्वा
10. कंठ
11. कोमल तालु
12. मूर्धा
13. कठोर तालु
14. वर्त्स
15. दाँत
16. ओष्ठ
17. जिह्वामध्य
18. जिह्वानोक
19. जिह्वाअग्र
20. जिह्वा
21. जिह्वापश्च
22. जिह्वामूल

उपरोक्त चित्र पर दृष्टि वर्णों के उच्चारण स्थान एवं उनके भेदों की बेहतर समझ के लिए अनिवार्य है। मनुष्य मूलधार से वायु को ऊपर की ओर उठाते हुए मुख के अंदर जिह्वा की सहायता से वर्ण विशेष के उच्चारण के लिए विशिष्ट स्थान पर ले जाता है। मनुष्य की इस वायु चालन संबंधी क्रिया को प्रयत्न कहा जाता है तथा जिस स्थान पर वर्ण को वह उच्चरित करता है वह स्थान उच्चारण स्थान कहा जाता है। इसका अभिप्राय यह है कि उच्चारण के समय भीतर से आती हुई श्वास वायु को मुख के अलग-अलग अवयव विकृत करके बाहर निकालते हैं। जिन अवयवों द्वारा यह विकार उत्पन्न किया जाता है उन्हें ही उच्चारण स्थान कहते हैं। इस दृष्टि से ऊपरी जबड़े के अचल अवयव अर्थात् न चलने या हिलने वाले अवयव यानी ऊपरी ओष्ठ, ऊपरी दाँत, वर्त्स (दंतमूल), कठोर तालु, मूर्धा, कोमल तालु, कंठ और स्वर यंत्र प्रमुख उच्चारण स्थान हैं। ऊपरी ओष्ठ से लेकर पीछे तक इन अवयवों को आप स्वतः महसूस कर सकते हैं। इन उच्चारण स्थानों पर जब चल अवयव अर्थात् मुख के भीतर के वे अंग जिन्हें ऊपर या नीचे की ओर हिलाया जा सकता है यानी जिह्वा एवं निचला ओष्ठ ऊपर की ओर जा कर हवा के मार्ग को अवरुद्ध करते हैं तब भिन्न-भिन्न वर्णों के उच्चारण संभव हो पाते हैं। यहाँ ध्यातव्य है कि निचले ओष्ठ मुख्य रूप से ऊपरी ओष्ठ और ऊपरी दंत पंक्तियों से टकराते हैं और इस भांति हवा का मार्ग रोकते हैं, जबकि शेष सभी स्थानों पर जिह्वा द्वारा अवरोध उत्पन्न किया जाता है। अवरोध की यह क्रिया जिह्वा के अग्र, मध्य अथवा पश्च किसी भी भाग द्वारा की जा सकती है और उच्चारण के स्वरूप पर इसका भी असर पड़ता है। कुल मिलाकर इस तरह जिस उच्चारण स्थान पर ये अवयव अवरोध उत्पन्न करते हैं उस आधार पर वर्णों के भेद किये जाते हैं।

5.4 उच्चारण के स्थान के आधार पर वर्णों के भेद

उच्चारण के स्थान को यदि आधार मानें तो वर्णों के अवरोध स्थान मुख्यतः कंठ, मूर्धा, तालु, ओष्ठ और नासिका हैं और इन्हीं के अनुसार इनके भेदों का नामकरण मुख्य रूप से कंठ्य, तालव्य, मूर्धन्य, ओष्ठ्य, कंठ-तालव्य, कंठोष्ठ्य और आनुनासिक्य माने जाते हैं। विस्तार से इन भेदों का परिचय निम्नलिखित है –

स्वर यंत्र मुखी – वह वर्ण जिसका उच्चारण स्वर यंत्र मुख से किया जाता है उसे स्वर यंत्र मुखी कहते हैं। इसे काकल्य स्वरतंत्रीय, उरस्य जैसे नामों से भी पुकारा जाता है। हिन्दी वर्णमाला में केवल 'ह' इस श्रेणी में आता है।

कंठ्य – इस श्रेणी में वे सभी वर्ण सम्मिलित किए जाते हैं जिनका उच्चारण स्थान कंठ है। ये कंठ पर जिह्वा के अवरोध से उच्चरित किए जाते हैं और ये मुख्यतः जिह्वा के पिछले भाग के सहारे उच्चरित होते हैं। इसीलिए इन्हें कोमल तालव्य कहे जाने का भी चलन है। इस श्रेणी में स्वरों में से अ एवं आ के साथ विसर्ग (अः) शामिल है, व्यंजनों में क वर्ग के सभी व्यंजन इसमें शामिल हैं। कुछ विद्वान ह को भी इसी वर्ग में रखने के हिमायती है।

अतः कंठ्य वर्णों की सूची निम्न है –

- अ, आ, अः तथा
- क, ख, ग, घ, ङ

तालव्य – उच्चारण की क्रिया में जिन वर्णों का उच्चारण तालु से होता है उन्हें तालव्य कहते हैं। तालु पर जिह्वा के स्पर्श से ये वर्ण बोले जाते हैं। स्वर वर्णों में इस श्रेणी में इ एवं ई स्वर शामिल हैं। दूसरी ओर व्यंजनों की श्रेणी में सम्पूर्ण च वर्ग तथा अन्तःस्थ व्यंजन य तथा ऊष्म व्यंजन में श शामिल हैं। अतः तालव्य वर्णों की सूची निम्न है –

- इ, ई तथा
- च, छ, ज, झ, ञ, य, श

मूर्धन्य – जिन वर्णों का उच्चारण मूर्धा से होता है, वे मूर्धन्य कहे जाते हैं। इस श्रेणी में मूर्धा पर जिह्वा के स्पर्श से उच्चारण संभव होता है। स्वरों में केवल ऋ इस श्रेणी में शामिल है। दूसरी ओर व्यंजनों में सम्पूर्ण ट वर्ग अन्तःस्थ व्यंजन में से र तथा ऊष्म व्यंजन में से श शामिल हैं। मूर्धन्य वर्णों का विवरण निम्न है –

- ऋ तथा
- ट, ठ, ड, ढ, ण, र, श

ओष्ठ्य – जिन वर्णों का उच्चारण ओष्ठों की सहायता से होता है उन्हें ओष्ठ्य वर्ण कहते हैं। इन्हें द्वयोष्ठ्य भी कहा जाता है। दोनों ओष्ठों की सहायता से इनका उच्चारण संभव हो पाता है। इस श्रेणी में स्वीकृत स्वरों में उ एवं ऊ हैं। दूसरी ओर व्यंजनों में इस वर्ग में सम्पूर्ण प वर्ग शामिल किए जाते हैं। अतः ओष्ठ्य वर्णों का विवरण निम्न है –

- उ, ऊ तथा
- प, फ, ब, भ, म

दन्त्य – दन्त्य वर्णों से अभिप्राय उन वर्णों से है जिनका उच्चारणदांतों पर जिह्वा के लगने से होता है। इस श्रेणी में व्यंजनों में पूरा त वर्ग, अंतःस्थ व्यंजन से ल तथा ऊष्म से स सम्मिलित हैं।

वर्त्स्य – जिन वर्णों का उच्चारण वर्त्स यानी मसूड़े और जिह्वाग्र की सहायता से होता है उन्हें वर्त्स्य कहते हैं। इस वर्ग में व्यंजनों में से ल, स, र, शामिल हैं। कुछ विद्वान न को दन्त्य न मान कर वर्त्स्य की कोटि में रखते हैं।

कंठ-तालव्य – जिन वर्णों का उच्चारण कंठ एवं तालु के सम्मिलित प्रयास से संभव हो पाता है। वे कंठ-तालव्य कहे जाते हैं। ये कंठ और तालु पर जिह्वा के स्पर्श से बोले जाते हैं। इस श्रेणी में ए और ऐ स्वर सम्मिलित हैं।

कंठोष्ठ्य – कंठ और ओष्ठों के सम्मिलित प्रयास से जिन वर्णों का उच्चारण सम्भव हो पाता है उन्हें कंठोष्ठ्य कहते हैं। कंठ द्वारा जिह्वा और ओष्ठों के कुछ स्पर्श द्वारा इनका उच्चारण किया जाता है। इस श्रेणी में ओ और औ स्वर शामिल हैं।

दन्त्योष्ठ्य – वे वर्ण जिनका उच्चारण ऊपर के दांत एवं नीचे के होठों की सहायता से होता है, उन्हें दन्त्योष्ठ्य कहते हैं। इस वर्ग में व आता है। कुछ विद्वान फ व्यंजन को भी इस वर्ग में रखते हैं।

अनुनासिक-नासिक्य – इस वर्ग में मुख और नासिका से उच्चरित होने वाले वर्ण आते हैं। जिनका उच्चारण मुख और नासिका के सम्मिलित योग से होता है। इस कोटि में स्वरों में से अनुस्वार(अं) और व्यंजनों में सभी पंचमाक्षरों को शामिल किया जाता है। इस तरह ङ, ञ, ण, न एवं म इस वर्ग में आते हैं।

उपरोक्त विस्तृत वर्णन से उच्चारण स्थानों के आधार पर वर्णों के भेद पूर्णतः स्पष्ट हैं। अधिक स्पष्टता के लिए इन्हें एक बार तालिका में देख लेना चाहिए –

कंठ्य	अ, आ, अः, क, ख, ग, घ, ङ, ह
तालव्य	इ, ई, च, छ, ज, झ, ञ, य, श
ओष्ठ्य	उ, ऊ, प, फ, ब, भ, म
मूर्धन्य	ऋ, ट, ठ, ड, ढ, ण, श, र
कंठ-तालव्य	ए, ऐ
कंठोष्ठ्य	ओ, औ
दन्त्य	त, थ, द, ध, न, ल, स
वर्त्स्य	ल, स, र, न
दन्तोष्ठ्य	व, फ
स्वरयंत्रमुखी	ह
अनुनासिक-नासिक्य	अं, ङ, ञ, ण, न, म

इस तरह उच्चारण के आधार पर, वर्णों के वर्गीकरण के आधार एवं उसके प्रमुख भेदों को आप उपरोक्त चर्चा से स्पष्टतः ग्रहण कर सकते हैं।

बोध प्रश्न 1

क) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें

1. उच्चारण स्थान से अभिप्राय क्या है।

   .....

   .....

   .....

2. स्वर वर्णों को व्यंजन वर्णों से पृथक् करने के क्या आधार हैं?

   .....

   .....

   .....

3. उच्चारण स्थान के आधार पर स्वरों के मुख्य वर्गीकरण कौन से हैं?

   .....

   .....

   .....

4. उच्चारण स्थान के अनुसार व्यंजन के भेद मुख्य बताए।

.....

.....

.....

5. उच्चारण अवयव का परिचय दें।

.....

.....

.....

6. हिन्दी की वर्ण व्यवस्था का परिचय दें।

.....

.....

.....

ख) निम्नलिखित कथनों पर सही (✓) या गलत (×) का चिह्न लगाएं –

i) ह्रस्व स्वरों के उच्चारण में अधिक समय लगता है। ( )

ii) ई तालव्य की कोटि में शामिल वर्ण है। ( )

iii) जिह्वा एक प्रमुख उच्चारण स्थान है। ( )

iv) स्वरों का उच्चारण अवरोधहीन होता है। ( )

v) व्यंजन के उच्चारण में स्वर से दुगना समय लगता है। ( )

vi) ह स्वरयन्त्रमुखी है। ( )

vii) ऋ एक कंठ्य स्वर है। ( )

viii) प और म कंठ्य वर्ण हैं। ( )

ix) इ एवं ई मुख्यतः कंठ्य तालव्य वर्ण हैं। ( )

x) विसर्ग कंठ्य स्वर में शामिल किया जाता है। ( )

ग) रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिएः

1. मूर्धन्य वर्णों का उच्चारण मूर्धा पर ..... के स्पर्श से होता है। (जिह्वा / ओष्ठ)

2. अं एवं अः को ..... भी कहा जाता है। (अयोगवाह / नासिक्य)

3. ण,न तथा ञ ..... वर्ण हैं। (नासिक्य / वर्त्स्य)

4. ओ तथा औ ..... वर्ण हैं। (मूर्धन्य / कंठोष्ठ्य)

5. तालव्य वर्ण का उच्चारण तालु पर ..... की सहायता से होता। (जिह्वा / ओष्ठ)

5.5 सारांश

इस इकाई का उद्देश्य हिन्दी भाषा के वर्णों व उनके उच्चारण स्थानों से आपको भली प्रकार परिचित कराना था। आप यहाँ विस्तृत रूप से हिन्दी भाषा की वर्ण व्यवस्था को

भी समझ सके हैं। समूची वर्ण व्यवस्था को समझने के उपरांत स्वर व व्यंजन की बेहतर समझ विकसित की जा सकती है, साथ ही इनकी विशेषताएँ भी जानी जा सकती है। इस अध्याय में उच्चारण स्थान संबंधी विस्तृत जानकारी भी प्राप्त की जा सकी। इन उच्चारण संबंधी इन नियमों के आधार पर वर्ण व्यवस्था व उसके उच्चारण से संबंधित विस्तृत अध्ययन द्वारा भाषा उच्चारण की बेहतर समझ विकसित की जा सकती है। इससे उच्चारण संबंधी दोषों का निवारण और भाषा की एक बेहतर समझ का विकास संभव होता है।

5.6 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

ख) i) (×)
ii) (✓)
iii) (×)
iv) (✓)
v) (✓)
vi) (×)
vii) (×)
viii (×)
ix) (×)
x) (✓)

ग) 1. जिह्वा
2. अयोवाह
3. नासिक्य
4. कंठोष्ठ्य
5. जिह्वा

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

कुछ उपयोगी पुस्तकें

- **कृष्ण कुमार गोस्वामी** (1981) शैक्षिक व्याकरण और व्यावहारिक हिन्दी, दिल्ली : आलेख प्रकाशन।
- **मोतीलाल गुप्त और रघुवीर प्रसाद भटनागर** (1974) आधुनिक भाषा विज्ञान की भूमिका, जयपुर : राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
- **पांडेय शशिभूषण 'शीतांशु'** (2013) भाषा-विमर्श : भाषा वैज्ञानिक संदर्भ, नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन।
- **Hocket, C.F.** (1970) A Course in Modern Linguistics, New Delhi : Oxford & IBH Publishing House.
- **भाषा विज्ञान** – भोलानाथ तिवारी
- **सामान्य भाषा विज्ञान** – बाबूराम सक्सेना
- **हिंदी भाषा की संरचना** – भोलानाथ तिवारी
- **सुगम भाषा विज्ञान** – त्रिलोकीनाथ सिंह
- **भाषा विज्ञान** – बाबू श्याम सुंदर दास
- **हिंदी व्याकरण** – कामता प्रसाद गुरु
- **आधुनिक हिंदी व्याकरण और रचना** – वासुदेवनंदन प्रसाद
- **भारतीय भाषा विज्ञान** – किशोरीदास वाजपेयी
- **हिंदी ध्वनियाँ और उनका उच्चारण** – भोलानाथ तिवारी
- **भाषा विज्ञान की भूमिका** – देवेंद्रनाथ शर्मा।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY